ॐ

श्री आदिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पञ्च कल्याणक
प्रतिष्ठा महोत्सव के अवसर पर

मङ्गल महोत्सव पूजाञ्जलि

सङ्कलनकर्ता :
प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्रह्मचारी पण्डित अभिनन्दनकुमार शास्त्री

सम्पादक :
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर

प्रकाशन सहयोग :
स्व. श्री अरिदमनलाल एवं स्व. श्री रघुनन्दनलाल जैन
हस्ते विनोदकुमार, विजयकुमार, विपिनकुमार जैन परिवार
कोटा, राजस्थान

प्रकाशक :
तीर्थधाम मङ्गलायतन
श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट
अलीगढ़-आगरामार्ग, सासनी - 204216 (उत्तरप्रदेश)

प्रथम संस्करण : 3000 प्रतियाँ
द्वितीय संस्करण : 1000 प्रतियाँ
(श्री आदिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के पावन अवसर पर, दिनाँक 23 दिसम्बर 2010)

न्योछावर राशि : रुपये 10.00

Available At -

— **TEERTHDHAM MANGALAYATAN,**
Aligarh-Agra Road, Sasni-204216, Hathras (U.P.)
Website : www.mangalayatan.com;
e-mail : info@mangalayatan.com

— **Pandit Todarmal Smarak Bhawan,**
A-4, Bapu Nagar, Jaipur-302015 (Raj.)

— **SHRI HITEN A. SHETH,**
Shree Kundkund-kahan Parmarthik Trust
302, Krishna-Kunj, Plot No. 30,
Navyug CHS Ltd., V.L. Mehta Marg,
Vile Parle (W), Mumbai - 400056
e-mail : vitragva@vsnl.com / shethhiten@rediffmail.com

— **Shri Kundkund Kahan Jain Sahitya Kendra,**
Songarh (Guj.)

टाइप सेटिंग :
मङ्गलायतन ग्राफिक्स, अलीगढ़

मुद्रक :
देशना कम्प्यूटर्स, जयपुर

प्रकाशकीय

मङ्गलायतन विश्वविद्यालय में नवनिर्मित श्री महावीरस्वामी दिगम्बर जिनमन्दिर के पञ्च कल्याणक के पावन अवसर पर **मङ्गल महोत्सव पूजाञ्जलि** का द्वितीय संस्करण प्रकाशित करते हुए हमें अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। इस पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में हजारों की संख्या में देश-विदेश से मुमुक्षु भाई-बहन पधार रहे हैं, जो पूजन, विधान, प्रवचन, भक्ति-संगीत आदि के कार्यक्रम में भाग लेंगे। इनमें से प्रवचन आदि तो जन-समुदाय के लिए लाभदायक होते ही हैं, लेकिन पञ्च कल्याणक महोत्सवों से सम्बन्धित क्रियाएँ या तो संस्कृत में की जाती है तो जन-समुदाय की समझ के बाहर हैं अथवा हिन्दी पद्यानुवाद के द्वारा भी होती हैं, तो उनकी पुस्तक सभी को उपलब्ध नहीं होती; अत: मात्र प्रतिष्ठाचार्य के पास ही पुस्तक होती है, वही पढ़ता जाता है; अत: जनसामान्य भी इस पूजन-विधानों के अन्दर समाहित तत्त्वज्ञान से लाभान्वित हो, इस भावना से पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है।

वास्तव में जो-जो महोत्सव में भाग लेते हैं प्रत्येक के हाथ में यह पुस्तक होना चाहिए तथा प्रतिष्ठाचार्य के साथ-साथ सभी लोगों को पूजनों के प्रतिपाद्य को समझकर रसास्वाद लेना चाहिए। अत: इस पुस्तक के प्रकाशन की आवश्यकता समझी गयी।

इस पुस्तक का सङ्कलन प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्रह्मचारी पण्डित अभिनन्दनकुमार शास्त्री ने एवं सम्पादन डॉ. राकेश जैन शास्त्री ने किया है।

इस पुस्तक के प्रकाशन सहयोग के रूप में स्व. श्री अरिदमनलाल एवं स्व. श्री रघुनन्दनलाल जैन की स्मृति में श्री विनोदकुमार, विजयकुमार, विपिनकुमार जैन परिवार, कोटा, (राजस्थान) का आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ है। तदर्थ हम आभारी हैं।

पवन जैन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर

जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ.प्र.)

वीतरागता के लक्ष्यपूर्वक भगवान की भक्ति

चेतन, जड़ नहीं होता और जड़, चेतन नहीं होता। जड़ के स्वभाव में चेतनपना नहीं होता और चेतन के स्वभाव में जड़पना नहीं होता। जड़ के संयोग से होनेवाला विकार भी वस्तुतः चेतन का स्वभाव नहीं है। जैसे, सर्वज्ञदेव वीतराग बिम्ब है, वैसा ही आत्मा का स्वभाव है – ऐसे लक्ष्यसहित वीतराग भगवान की भक्ति इत्यादि का राग आवे, वह प्रातःकाल की सन्ध्या / लालिमा जैसा है। जिस प्रकार प्रातःकाल की सन्ध्या / लालिमा के पश्चात् सूर्योदय होता है और सायंकाल की सन्ध्या / लालिमा के पश्चात् सूर्यास्त हो जाता है; उसी प्रकार वीतरागता के लक्ष्यपूर्वक भगवान की भक्ति इत्यादि का जो शुभराग है, वह प्रातःकालीन लालिमा के समान है; तत्पश्चात् जगमगाता चैतन्य सूर्य उदय होनेवाला है।

जिसे वीतरागता का लक्ष्य नहीं है, वीतरागदेव की भक्ति नहीं है और मात्र शरीरादि जड़ के राग का ही पोषण करता है, उसे तो उस लालिमा के पश्चात् अन्धकार आयेगा, उससे चैतन्यसूर्य ढँक जायेगा।

जहाँ स्वभाव का लक्ष्य है, वहाँ वर्तमान राग की लालिमा की मुख्यता नहीं है, अपितु यह राग मेरा स्वरूप नहीं है; इस प्रकार वीतरागस्वरूप के लक्ष्य से वह राग मिटकर चैतन्य प्रकाश प्रगट होगा और पूर्ण केवलज्ञान होगा।

(– सोनगढ़ प्रतिष्ठा महोत्सव के प्रवचनों से)

श्री पञ्च परमेष्ठी पूजन

(वीर छन्द)

अरहन्त सिद्ध आचार्य नमन, हे उपाध्याय हे साधु नमन।
जय पञ्च परम परमेष्ठी जय, भवसागर तारणहार नमन॥

मन-वच-काया पूर्वक करता हूँ, शुद्ध हृदय से आह्वानन।
मम हृदय विराजो तिष्ठ-तिष्ठ, सन्निकट होहु मेरे भगवन॥

निज आत्मतत्त्व की प्राप्ति हेतु, ले अष्ट द्रव्य करता पूजन।
तुम चरणों की पूजन से प्रभु, निज सिद्धरूप का हो दर्शन॥

ॐ ह्रीं श्रीअरहन्त-सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिनः! अत्र अवतरत अवतरत संवौष्ट्।

ॐ ह्रीं श्रीअरहन्त-सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिनः! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्रीअरहन्त-सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिनः! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

मैं तो अनादि से रोगी हूँ, उपचार कराने आया हूँ।
तुम सम उज्ज्वलता पाने को, उज्ज्वल जल भरकर लाया हूँ॥
मैं जन्म-जरा-मृत नाश करूँ, ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी।
हे पञ्च परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामिति स्वाहा।

संसारताप में जल-जल कर, मैंने अगणित दुःख पाये हैं।
निज शान्त स्वभाव नहीं भाया, पर के ही गीत सुहाये हैं॥

शीतल चन्दन है भेंट तुम्हें, संसारताप नाशो स्वामी।
हे पञ्च परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु:ख मेटो अन्तर्यामी॥
ॐ ह्रीं श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्य: संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

दु:खमय अथाह भवसागर में, मेरी यह नौका भटक रही।
शुभ-अशुभ भाव की भँवरों में, चैतन्य-शक्ति निज अटक रही॥
तन्दुल है धवल तुम्हें अर्पित, अक्षयपद प्राप्त करूँ स्वामी।
हे पञ्च परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु:ख मेटो अन्तर्यामी॥
ॐ ह्रीं श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मैं काम-व्यथा से घायल हूँ, सुख की न मिली किञ्चित छाया।
जग के सारे पदार्थ पाकर भी, तृप्त नहीं हो पाया हूँ॥
नैवेद्य समर्पित करता हूँ, यह क्षुधा-रोग मेटो स्वामी।
हे पञ्च परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु:ख मेटो अन्तर्यामी॥
ॐ ह्रीं श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्ध महा-अज्ञानी मैं, निज को पर का कर्ता माना।
मिथ्यातम के कारण मैंने, निज आत्मस्वरूप न पहिचाना॥
मैं दीप समर्पण करता हूँ, मोहान्धकार क्षय हो स्वामी।
हे पञ्च परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु:ख मेटो अन्तर्यामी॥
ॐ ह्रीं श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्य: मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की ज्वाला धधक रही, संसार बढ़ रहा है प्रतिपल।
संवर से आस्रव को रोकूँ, निर्जरा सुरभि महके पल-पल॥
मैं धूप चढ़ाकर अब आठों, कर्मों का हनन करूँ स्वामी।
हे पञ्च परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु:ख मेटो अन्तर्यामी॥
ॐ ह्रीं श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्मतत्त्व का मनन करूँ, चिन्तवन करूँ निज चेतन का।
दो श्रद्धा-ज्ञान-चरित्र श्रेष्ठ, सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का॥

उत्तम फल चरण चढ़ाता हूँ, निर्वाण महा फल हो स्वामी।
हे पञ्च परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन अक्षत पुष्प दीप, नैवेद्य धूप फल लाया हूँ।
अब तक के सञ्चित कर्मों का, मैं पुञ्ज जलाने आया हूँ॥
यह अर्घ्य समर्पित करता हूँ, अविचल अनर्घ्य पद दो स्वामी।
हे पञ्च परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(पद्धरि)

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, निज ध्यान लीन गुणमय अपार।
अष्टादश दोष रहित जिनवर, अरहन्त देव को नमस्कार॥
अविकल अविकारी अविनाशी, निजरूप निरञ्जन निराकार।
जय अजर अमर हे मुक्तिकन्त, भगवन्त सिद्ध को नमस्कार॥

छत्तीस सुगुण से तुम मण्डित, निश्चय रत्नत्रय हृदय धार।
हे मुक्तिवधू के अनुरागी, आचार्य सुगुरु को नमस्कार॥
एकादश अङ्ग पूर्व चौदह के, पाठी गुण पच्चीस धार।
बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान, श्री उपाध्याय को नमस्कार॥

व्रत समिति गुप्ति चारित्रधर्म, वैराग्य भावना हृदय धार।
हे द्रव्य-भाव संयममय मुनिवर, सर्व साधु को नमस्कार॥

बहु पुण्य संयोग मिला नरतन, जिनश्रुत जिनदेव चरण दर्शन।
हो सम्यग्दर्शन प्राप्त मुझे, तो सफल बने मानव जीवन॥

निज-पर का भेद जानकर मैं, निज को ही निज में लीन करूँ।
अब भेदज्ञान के द्वारा मैं, निज आत्म स्वयं स्वाधीन करूँ॥
निज में रत्नत्रय धारण कर, निज परिणति को ही पहचानूँ।
पर-परिणति से हो विमुख सदा, निज ज्ञानतत्त्व को ही जानूँ॥

जब ज्ञान-ज्ञेय-ज्ञाता विकल्प तज, शुक्लध्यान मैं ध्याऊँगा।
तब चार घातिया क्षय करके, अरहन्त महापद पाऊँगा॥
है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा, हे प्रभु कब इसको पाऊँगा।
सम्यक् पूजा फल पाने को, अब निजस्वभाव में आऊँगा॥

अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु, हे प्रभु मैंने की है पूजन।
तब तक चरणों में ध्यान रहे, जब तक न प्राप्त हो मुक्ति सदन॥

ॐ ह्रीं श्रीअरहन्त-सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे मङ्गल रूप अमङ्गल हर, मङ्गलमय मङ्गल गान करूँ।
मङ्गल में प्रथम श्रेष्ठ मङ्गल, नवकार मन्त्र का ध्यान करूँ॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री यागमण्डल विधान पूजन

स्थापना

(गीता)

कर्मतम को हननकर निजगुण प्रकाशन भानु हैं,
अन्त अर क्रम रहित दर्शन-ज्ञान-वीर्य निधान हैं।
सुखस्वभावी द्रव्य चित् सत् शुद्ध परिणति में रमें,
आइये सब विघ्न चूरण पूजते सब अघ वमें॥

ॐ ह्रीं अत्र जिनप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय! अत्र अवतरत-अवतरत संवौषट्।

ॐ ह्रीं अत्र जिनप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय! अत्र तिष्ठत-तिष्ठत ठः-ठः।

ॐ ह्रीं अत्र जिनप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुन! अत्र मम सन्निहिता भवत-भवत वषट्।

अष्टक

(चाल)

गंगा-सिंधुवर पानी, सुवरण झारी भर लानी।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई॥ १॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध गन्ध लाय मनहारी, भवताप शमन करतारी।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई॥ २॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामिति स्वाहा।

शशिसम शुचि अक्षत लाये, अक्षयगुण हिय हुलसाये।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई॥ ३॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामिति स्वाहा।

शुभ कल्पद्रुमन सुमना ले, जग वशकर काम नशा ले।
गुरु पञ्चम परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई॥ ४॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामिति स्वाहा।

पकवान मनोहर लाये, जासे क्षुध रोग शमाये।
गुरु पञ्चम परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई॥ ५॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्य: क्षुधारोगनिवारणाय नैवेद्यं निर्वपामिति स्वाहा।

मणि रत्नमयी शुभ दीपा, तममोह हरण उद्दीपा।
गुरु पञ्चम परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई॥ ६॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामिति स्वाहा।

शुभ गंधित धूप चढ़ाऊँ, कर्मों के वंश जलाऊँ।
गुरु पञ्चम परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई॥ ७॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्य: अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामिति स्वाहा।

सुन्दर दिवि भव फल लाये, शिव हेतु सुचरण चढ़ाये।
गुरु पञ्चम परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई॥ ८॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामिति स्वाहा।

सुवरण के पात्र धराये, शुचि आठों द्रव्य मिलाये।
गुरु पञ्चम परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई॥ ४॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

(अडिल्ल)

काल अनन्ता भ्रमण करत जग जीव हैं।
तिनको भव तैं काढ़ि करत शुचि जीव हैं॥
ऐसे अर्हत् तीर्थनाथ पद ध्याय के।
पूजूँ अर्घ्य बनाय सुमन हरषाय के॥

ॐ ह्रीं अनन्तभवार्णव-भयनिवारक-अनन्तगुणस्तुताय अर्हत्परमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १॥

(हरिगीता)

कर्म-काष्ठ महान जाले, ध्यान-अग्नि जलायके।
गुण अष्ट लह व्यवहारनय, निश्चय अनन्त लहायके॥
निज आत्म में थिररूप रहके, सुधा स्वाद लखायके।
सो सिद्ध हैं कृतकृत्य चिन्मय, भजूँ मन उमगायके॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मविनाशकनिजात्मतत्त्वविभासकसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २॥

(त्रिभंगी)

मुनिगण को पालत आलस टालत आप सँभालत परम यती।
जिनवाणी सुहानी शिवसुखदानी भविजन मानी धर सुमती॥
दीक्षा के दाता अघ से त्राता समसुखभाता ज्ञानपती।
शुभ पञ्चाचारा पालन प्यारा हैं आचारज कर्महती॥

ॐ ह्रीं अनवद्यविद्याविद्योतनाय आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ३॥

(त्रोटक)

जय पाठक ज्ञान कृपान नमो, भवि जीवन हत अज्ञान नमो।
निज आत्म महानिधि धारक हैं, संशय वन दाह निवारक हैं॥

ॐ ह्रीं द्वादशांगपरिपूरणश्रुतपाठनोद्यतबुद्धिविभवोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ४॥

(द्रुतविलंबित)

सुभग तप द्वादश कर्तार हैं, ध्यानसार महान प्रचार हैं।
मुकति वास अचल यति साधते, सुख सु आतम जन्य सम्हारते॥

ॐ ह्रीं घोरतपोऽभिसंस्कृतध्यानस्वाध्यायनिरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ५॥

(मालिनी)

अरि हनन सु अरिहन पूज्य अर्हन् बताये। मं पाप गलन हेतु मङ्गलं ध्यान लाए॥
मङ्गं सुखकारण मङ्गलीकं जताये। ध्यानी छवि तेरी देखते दुःख नशाये॥

ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिमङ्गलाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ६॥

(चौपाई)

जय जय सिद्ध परम सुखकारी,
तुम गुण सुमरत कर्म निवारी।
विघ्नसमूह सहज हरतारे,
मङ्गलमय मङ्गल करतारे॥

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ७॥

(शार्दूलविक्रीड़ित)

राग-द्वेष महान सर्प शमने शम मंत्रधारी यती।
शत्रु-मित्र समान भाव करके भवतापहारी यती॥
मङ्गल सार महानकार अघहर सत्त्वानुकम्पी यती।
संयम पूर्ण प्रकार साध तप को संसारहारी यती॥

ॐ ह्रीं साधुमङ्गलाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ८॥

(शङ्कर)

जिनधर्म है सुखकार जग में धरत भवभयवन्त।
स्वर्ग-मोक्ष सुद्धार अनुपम धरे सो जयवन्त॥
सम्यक्त्व-ज्ञान-चारित्र लक्षण भजत जग में सन्त।
सर्वज्ञ रागविहीन वक्ता हैं प्रमाण महन्त॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्ममङ्गलाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ९॥

(झूलना)

चरण संस्पर्शते वन गिरि शुद्ध हो, नाम सतीर्थ को प्राप्त करते भये।
दर्श जिनका करे पूजते दुःख हरे, जन्म निज सार्थ भविजीव मानत भए॥

देव तुम लेखके, देव सब छोड़के, देव तुम उत्तमा, सन्त ठानत भए।
पूजते आपको, टालते ताप को, मोक्षलक्ष्मी निकट, आप जानत भये॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १०॥

(भुजङ्गप्रयात)

दरश ज्ञान वैरी करम तीव्र आये,
नरक पशुगति माँहि प्राणी पठाये।
तिन्हें ज्ञान-असितें हनन नाथ कीना,
परम सिद्ध उत्तम भजूँ रागहीना॥
ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमेभ्योर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ११॥

(चौपैया)

सूरज चन्द्र देवपति नरपति, पद सरोज नित वन्दे।
लोट-लोट मस्तक धर पग में, पातक सर्व निकन्दे॥
लोकमाँहि उत्तम यतियन में, जैनसाधु सुखकन्दे।
पूजत सार आत्मगुण पावत, होवत आप स्वच्छन्दे॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमेभ्योर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १२॥

(सृग्विणी)

जो दयाधर्म विस्तारता विश्व में,
नाश मिथ्यात्व अज्ञान कर विश्व में।
काम भाव दूर कर, मोक्षकर विश्व में,
सत्य जिनधर्म यह, धार ले विश्व में॥
ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मलोकोत्तमायर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १३॥

(मरहठा)

भव-भ्रमण नशाया शरण कराया, जीव-अजीवहिं खोज।
इन्द्रादिक देवा जाको पूजें, जग गुण गावे रोज॥
ऐसे अर्हत् की शरणा आये, रत्नत्रय प्रकटाय।
जासे ही जन्ममरण भय नाशे, नित्यानन्दी पाय॥
ॐ ह्रीं अर्हत्छरणेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४॥

(नाराच)

सुखी न जीव हो कभी, जहाँ कि देह साथ है।
सदा हि कर्म आस्रवै, न शान्तता लहात है॥
जो सिद्ध को लखाय, भक्ति एक मन करात है।
वही सुसिद्ध आप ही, स्वभाव आत्म पात है॥

ॐ ह्रीं सिद्धशरणेभ्योर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १५॥

(त्रोटक)

नहिं राग न द्वेष न काम धरें, भवदधि नौका भवि पार करें।
स्वारथ बिन सब हितकारक हैं, ते साधु जजूँ सुखकारक हैं॥

ॐ ह्रीं साधुशरणेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १६॥

(चामर)

धर्म ही सु मित्रसार, साथ नाहिं त्यागता,
पापरूप अग्नि को, सुमेघ सम बुझावता।
धर्म सत्य शरण यही, जीव को सम्हारता,
भक्ति धर्म जो करें, अनन्त ज्ञान पावता॥

ॐ ह्रीं धर्मशरणेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १७॥

(दोहा)

पञ्च परमगुरु सार हैं, मङ्गल उत्तम जान।
शरणा राखन को बली, पूजूँ कर उर ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिप्रभृतिधर्मशरणान्तप्रथमवलयस्थितसप्तदशजिनाधीशयागदेवताभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

द्वितीय वलय में भूतकाल के २४ तीर्थङ्करों की पूजा

(पद्धरि)

भवि लोक शरण निर्वाणदेव, शिव सुखदाता सब देव-देव।
पूजूँ शिवकारण मन लगाय, जासें भवसागर पार जाय॥
ॐ ह्रीं निर्वाणजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १८॥

तज राग-द्वेष ममता विहाय, पूजक जन सुख अनुपम लहाय।
गुणसागर-सागरजिन लखाय, पूजूँ मन-वच अर काय नाय॥
ॐ ह्रीं सागरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९॥

नय अर प्रमाण से तत्त्व पाय, निज जीवतत्त्व निश्चय कराय।
साधो तप केवलज्ञान दाय, ते महासाधु वन्दौं सुभाय॥
ॐ ह्रीं महासाधुजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २०॥

दीपक विशाल निज ज्ञान पाय, त्रैलोक्य लखे बिन श्रम उपाय।
विमलप्रभ निर्मलता कराय, जो पूजें जिनको अर्घ्य लाय॥
ॐ ह्रीं विमलजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २१॥

भवि शरण गेह मन शुद्धिकार, गावें थुति मुनिगण यश प्रचार।
शुद्धाभदेव पूजूँ विचार, पाऊँ आतम गुण मोक्ष द्वार॥
ॐ ह्रीं शुद्धाभदेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २२॥

अन्तर बाहर लक्ष्मी अधीश, इन्द्रादिक सेवत नाय शीस।
श्रीधर चरणा श्री शिव कराय, आश्रयकर्ता भवदधि तराय॥
ॐ ह्रीं श्रीधरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २३॥

जो भक्ति करें मन-वचन-काय, दाता शिवलक्ष्मी के जिनाय।
श्रीदत्त चरण पूजूँ महान, भवभय छूटे लहूँ अमल ज्ञान॥
ॐ ह्रीं श्रीदत्तजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २४॥

भामण्डल छवि वरणी न जाय, जहँ जीव लखैं भव सप्त आय।
मन शुद्ध करें सम्यक्त्व पाय, सिद्धाभ भजे भवभय नसाय॥
ॐ ह्रीं सिद्धाभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २५॥

अमलप्रभ निर्मल ज्ञान धरे, सेवा में इन्द्र अनेक खड़े।
नित सन्त सुमङ्गल गान करें, निज आतमसार विलास करें॥
ॐ ह्रीं अमलप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २६॥

उद्धार जिनं उद्धार करें, भव कारण भाँति विनाश करें।
हम डूब रहे भवसागर में, उद्धार करो निज आतम रमें॥
ॐ ह्रीं उद्धारजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २७॥

अग्निदेव जिनं हो अग्निमयी, अठ कर्मन ईंधन दाह दई।
हम असात तृणं कर दग्ध प्रभो, निज सम कर ले जिनराज प्रभो।
ॐ ह्रीं अग्निदेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २८॥

संयमजिन द्वैविध संयम को, प्राणी रक्षण इन्द्रिय दम को।
दीजे निश्चय निज संयम को, हरिये हम सर्व असंयम को॥
ॐ ह्रीं संयमजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २९॥

शिवजिन हैं शाश्वत सौख्यकरी, निजआत्मविभूति स्वहस्त करी।
शिववाञ्छक सब कर जोड़ नमें, शिवलक्ष्मी दो नहिं काहू नमें॥
ॐ ह्रीं शिवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ३०॥

पुष्पाञ्जलि पुष्पनितैं जजिये, सब कामव्यथा क्षण में हरिये।
निज शील स्वभावहि रम रहिये, आत्मजनित सुख को लहिये॥
ॐ ह्रीं पुष्पाञ्जलिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ३१॥

उत्साह जिनं उत्साह करें, निज संयम चन्द्रप्रकाश करें।
समभाव समुद्र बढ़ावत हैं, हम पूजत तब गुण पावत हैं॥
ॐ ह्रीं उत्साहजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ३२॥

चिन्तामणि सम चिन्ता हरिये, निज सम करिये भव तम हरिये।
परमेश्वरजिन ऐश्वर्य धरें, जो पूजें ताके विघ्न हरें॥
ॐ ह्रीं परमेश्वरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ३३॥

ज्ञानेश्वर ज्ञान समुद्र पाय, त्रैलोक्य बिन्दु सम जहँ दिखाय।
निज आतमज्ञान प्रकाशकार, वन्दू पूजूँ मैं बार-बार॥
ॐ ह्रीं ज्ञानेश्वरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ३४॥

कर्मों ने आत्म मलीन किया, तप अग्नि जला निज शुद्ध किया।
विमलेश्वर जिन मो विमल करो, मल-ताप सकल ही शान्त करो।
ॐ ह्रीं विमलेश्वरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ३५॥

यश जिनका विश्व प्रकाश किया, शशि कर इव निर्मल व्याप्त किया।
भट मोह-अरि को शान्त किया, यशधारी सार्थक नाम किया॥
ॐ ह्रीं यशोधरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ३६॥

समता भयक्रोध विनाश किया, जग काम-रिपु को शान्त किया।
शुचिताधर शुचिकर नाथ जूजूँ, श्री कृष्णमती जिन नित्य भजूँ॥
ॐ ह्रीं कृष्णमतिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ३७॥

शुचि ज्ञानमती जिन ज्ञान धरे, अज्ञान तिमिर सब नाश करें।
जो पूजें ज्ञान बढ़ावत हैं, आतम अनुभव सुख पावत हैं॥
ॐ ह्रीं ज्ञानमतिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ३८॥

(चौपाई)

शुद्धमती जिनधर्म धुरन्धर, जानत विश्व सकल एकीकर।
शुद्ध बुद्धि होवे जो पूजें, ध्यान करे भवि निर्मल हूजे॥
ॐ ह्रीं शुद्धमतिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ३९॥

(पद्धरि)

संसार विभूति उदास भये, शिवलक्ष्मी सार सुहात भये।
निज योग विशाल प्रकाश किया, श्रीभद्रजिनं शिववास लिया॥
ॐ ह्रीं श्रीभद्रजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ४०॥

सत्वीर्य अनन्त प्रकाश किये, निज आतमतत्त्व विकास किये।
जिन अनन्तवीर्य प्रभाव धरें, जो पूजें कर्म-कलङ्क हरें॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ४१॥

(दोहा)

भूत भरत चौबीस जिन, गुण सुमरूँ हर बार।
मङ्गलकारी लोक में, सुख-शान्ति दातार॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे यागमण्डलेश्वरद्वितीयवलयोन्मुद्रितनिर्वाणाद्यनन्त-वीर्यान्तेभ्यो भूतजिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

कोई इत आओ जी...

कोई इत आओ जी, वीतराग ध्याओ जी।
जिनगुण की आरती, सँजोय लाओ जी॥ टेक॥

दया का हो दीपक, क्षमा की हो ज्योत।
तेल सत्य संयम में, ज्ञान का उद्योत।
मोह तम नशाओ जी, वीतराग ध्याओ जी, जिनगुण की... ॥ १॥

संयम की आरती में समकित सुगन्ध।
दर्श ज्ञान चारित्र की, हृदय में उमङ्ग॥
भेद-ज्ञान पाओजी, वीतराग ध्याओ जी, जिनगुण की... ॥ २॥

नर-तन को पाय कर भूलियो मती।
बन जा दिगम्बर महाव्रत यती॥
भावना ये भावो जी, वीतराग ध्याओ जी, जिनगुण की... ॥ ३॥

जिनगुण की आरती में ध्यान की कला।
भव-भव के लागे सब कर्म लो गला॥
भवभ्रमण मिटाओ जी, वीतराग ध्याओ जी, जिनगुण की... ॥ ४॥

तृतीय वलय में वर्तमानकाल के २४ तीर्थङ्करों की पूजा

(चाल)

मनु नाभि महीधर जाये, मरुदेवी उदर उतराये।
युग आदि सुधर्म चलाया, वृषभेष जजों वृष पाया॥

ॐ ह्रीं ऋषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ४२॥

जित शत्रु जने व्यवहारा, निश्चय आयो अवतारा।
सब कर्मन जीत लिया है, अजितेश सुनाम भया है॥

ॐ ह्रीं अजितजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ४३॥

दृढ़राज सुयश आकाशे, सूरजसम नाथ प्रकाशे।
जग-भूषण शिवगति दानी, सम्भव जज केवलज्ञानी॥

ॐ ह्रीं सम्भवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ४४॥

कपिचिह्न धरे अभिनन्दा, भवि जीव करे आनन्दा।
जन्मन मरणा दु:ख टारें, पूजें ते मोक्ष सिधारें॥

ॐ ह्रीं अभिनन्दनजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ४५॥

सुमतीश जजों सुखकारी, जो शरण गहें मतिधारी।
मति निर्मल कर शिव पावें, जग-भ्रमण हि आप मिटावें॥

ॐ ह्रीं सुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ४६॥

धरणेश सुनृप उपजाये, पद्मप्रभ नाम कहाये।
है रक्त कमल पग चिह्ना, पूजत सन्ताप विछिन्ना॥

ॐ ह्रीं पद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ४७॥

जिनचरणा रज सिर दीनी, लक्ष्मी अनुपम कर कीनी।
हैं धन्य सुपारश नाथा, हम छोड़ें नहिं जग साथा॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ४८॥

शशि तुम लखि उत्तम जग में, आया बसने तव पग में।
हम शरण गही जिन चरणा, चन्द्रप्रभ भवतम हरणा॥
ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ४९॥

तुम पुष्पदन्त जितकामी, है नाम सुविधि अभिरामी।
वन्दूँ तेरे जुग चरणा, जासे हो शिवतिय वरणा॥
ॐ ह्रीं पुष्पदन्तजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ५०॥

श्री शीतलनाथ अकामी, शिवलक्ष्मीवर अभिरामी।
शीतल कर भव आतापा, पूजूँ हर मम सन्तापा॥
ॐ ह्रीं शीतलनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ५१॥

श्रेयांस जिना जुग चरणा, चित धारूँ मङ्गल करणा।
परिवर्तन पञ्च विनाशे, पूजनतें ज्ञान प्रकाशे॥
ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ५२॥

इक्ष्वाकु सुवंश सुहाया, वसुपूज्य तनय प्रगटाया।
इन्द्रादिक सेवा कीनी, हम पूजें जिनगुण चीह्नी॥
ॐ ह्रीं वासुपूज्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ५३॥

कापिल्य पिता कृतवर्मा, माता श्यामा शुचिवर्मा।
श्री विमल परम सुखकारी, पूजा द्वै मल हरतारी॥
ॐ ह्रीं विमलनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ५४॥

साकेता नगरी भारी, हरिसेन पिता अविकारी।
सुर-असुर सदा जिनचरणा, पूजें भवसागर तरणा॥
ॐ ह्रीं अनन्तनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ५५॥

समवसृत द्वैविध धर्मा, उपदेशो श्री जिनधर्मा।
हितकारी तत्त्व बताये, जासे जन शिवमग पाये॥
ॐ ह्रीं धर्मनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ५६॥

कुरुवंशी श्री विश्वसेना, ऐरादेवी सुख देना।
श्री हस्तिनागपुर आये, जिन शान्ति जजों सुख पाये॥
ॐ ह्रीं शान्तिनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ५७॥

श्री कुन्थु दयामय ज्ञानी, रक्षक षट्कायी प्राणी।
सुमरत आकुलता भाजे, पूजत ले दर्व सु ताजे॥
ॐ ह्रीं कुन्थुनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ५८॥

शुभदृष्टी राय सुदर्शन, अर जाये त्रय भू-पर्शन।
माता सेना उर रत्नं, धर चिह्न सुमन जज यत्नं॥
ॐ ह्रीं अरनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ५९॥

नृप कुम्भ धरणि से जाए, जिन मल्लिनाथ मुनि पाये।
जिन यज्ञ विघ्न हरतारे, पूजूँ शुभ अर्घ्य उतारे॥
ॐ ह्रीं मल्लिनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ६०॥

हरिवंश सु सुन्दर राजा, वप्रा माता जिनराजा।
मुनिसुव्रत शिवपथ कारण, पूजूँ सब विघ्न निवारण॥
ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ६१॥

मिथिलापुर विजय नरेन्द्रा, कल्याण पाँच कर इन्द्रा।
नमि धर्मामृत वर्षायो, भव्यन खेती अकुलायो॥
ॐ ह्रीं नमिनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ६२॥

द्वारकापति विजयसमुद्रा, जन्मे यदुवंश जिनेन्द्रा।
हरिबल पूजित जिनचरणा, शंखांक अम्बुधर वरणा॥
ॐ ह्रीं नेमिनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ६३॥

काशी विश्वसेन नरेशा, उपजायो पार्श्व जिनेशा।
पद्मा अहिपति पग वन्दे, रिपु कमठ मान निःकन्दे॥
ॐ ह्रीं पार्श्वनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ६४॥

सिद्धार्थराय त्रय ज्ञानी, सुत वर्द्धमान गुणखानी।
समवसृत श्रेणिक पूजे, तुम सम हैं देव न दूजे।

ॐ ह्रीं वर्द्धमानजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ६५॥

(दोहा)

वर्तमान चौबीस जिन, उद्धारक भवि जीव।
बिम्ब प्रतिष्ठा साधने, यजूँ परम सुख नीव॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् यागमण्डले मुख्यार्चिततृतीयवलयोन्मुद्रितवर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

भावे भजो, भावे भजो....

भावे भजो, भावे भजो जिनराया
चौबीस जिनवर पाया जी पाया॥ टेक॥

ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन, सुमति पद्म सुपार्श्व पद वन्दन।
आतम में अपनापन करके, मिथ्यातम को दूर भगाया॥
जिनवर भजूँ, आतम लखूँ, जिनराया। चौबीस जिनवर... ॥ १॥
चन्द्र पुहुप शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज्य अरहन्त महा जिन।
वीतराग परिणति प्रकटाकर, निर्ग्रन्थों का पथ अपनाया॥
समकित लहूँ, चारित्र लहूँ, जिनराया। चौबीस जिनवर... ॥ २॥
विमल अनन्त धर्म जस उज्ज्वल, शान्ति कुन्थु अर मल्लि सुनिर्मल।
शुक्लध्यान की श्रेणी चढ़कर, क्षण में केवलज्ञान उपाया।
आनन्द लहूँ, कैवल्य लहूँ, जिनराया। चौबीस जिनवर... ॥ ३॥
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व प्रभु, वर्धमान जिनराज महाविभु।
स्याद्वादमय दिव्यध्वनि से, जग को मुक्ति-मार्ग बताया॥
ऐसा बनूँ, तुम जैसा बनूँ, जिनराया। चौबीस जिनवर... ॥ ४॥

चतुर्थ वलय में भविष्यकाल के २४ तीर्थङ्करों की पूजा

(चौपाई)

महापद्मजिन भावीनाथ, श्रेणिक जीव जगत विख्यात।
लक्ष्मी चञ्चल लिपटी आन, तब चरणा पूजूँ भगवान॥
ॐ ह्रीं महापद्मजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ६६॥

देव चतुर्विधि पूजे पाय, नाय-नाय सुरप्रभजिनराय।
हम सुमरण करके हरषाय, पूजूँ हर्ष न अङ्ग समाय॥
ॐ ह्रीं सुरप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ६७॥

सुप्रभू जिन के वन्दूँ पाय, सेवकजन सुखसार बढ़ाय।
करुणाधारी धन दातार, जो अविनाशी जिय सुखकार॥
ॐ ह्रीं सुप्रभुजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ६८॥

मोक्ष राज्य देवें नहिं कोय, स्वयं आत्मबल लेवें सोय।
देव स्वयंप्रभ चरण नमाय, पूजूँ मन-वच ध्यान लगाय॥
ॐ ह्रीं स्वयंप्रभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ६९॥

मन-वच-काय गुप्ति धरतार, तीव्र शस्त्र अघ मारणहार।
सर्वायुध जिन साम्य प्रचार, पूजत जग मङ्गल करतार॥
ॐ ह्रीं सर्वायुधदेवाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ७०॥

कर्म शत्रु जीतन बलवान, श्रीजयदेव परम सुखखान।
पूजत मिथ्यातम विघटाय, तत्त्व-कुतत्त्व प्रकट दर्शाय॥
ॐ ह्रीं जयदेवाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ७१॥

आत्मप्रभाव उदय जिन भयो, उदयप्रभजिन तातैं थयो।
पूजत उदय पुण्य का होय, पापबन्ध सब डालें खोय॥
ॐ ह्रीं उदयप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ७२॥

प्रभा मनीषा बुद्धिप्रकाश, प्रभादेव जिन छूटी आस।
पूजत प्रभा ज्ञान उपजाय, संशयतिमिर सबै हट जाय॥
ॐ ह्रीं प्रभादेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ७३॥

भव्यभक्ति जिनराज कराय, सफल काल तिनका हो जाय।
देव उदङ्क पूज जो करैं, मनुषदेह अपनी वर करें॥
ॐ ह्रीं उदङ्कदेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ७४॥

सुरविद्याधर प्रश्न कराय, उत्तर देत भरम टल जाय।
प्रश्नकीर्ति जिन यश के धार, पूजत कर्मकलङ्क निवार॥
ॐ ह्रीं प्रश्नकीर्तिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ७५॥

पापदलन तें जय को पाय, निर्मल यश जग में प्रकटाय।
गणधरादि नित वन्दन करें, पूजत पापकर्म सब हरें॥
ॐ ह्रीं जयकीर्तिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ७६॥

पूर्णबुद्धि जिन वन्दूँ पाय, केवलज्ञान ऋद्धि प्रकटाय।
चरण पवित्र करण सुखदाय, पूजत भवबाधा नश जाय॥
ॐ ह्रीं पूर्णबुद्धिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ७७॥

हैं कषाय जग में दु:खकार, आत्मधर्म की नाशनहार।
नि:कषाय होंगे जिनराज, तातें पूजूँ मङ्गल काज॥
ॐ ह्रीं नि:कषायजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ७८॥

कर्मरूप मल नाशनहार, आत्म शुद्ध कर्ता सुखकार।
विमलप्रभुजिन पूजूँ आय, जासे मन विशुद्ध हो जाय॥
ॐ ह्रीं विमलप्रभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ७९॥

दीप्तवन्त गुण धारणहार, बहुलप्रभ पूजों हितकार।
आतमगुण जासैं प्रकटाय, मोहतिमिर क्षण में विनशाय॥
ॐ ह्रीं बहुलप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ८०॥

जल नभ रत्न विमल कहवाय, सो अभूतव्यवहार वसाय।
भावकर्म अठकर्म महान, हत निर्मलजिन पूजूँ जान॥
ॐ ह्रीं निर्मलजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ८१॥

मन-वच-काय गुप्ति धरतार, चित्रगुप्ति जिन हैं अविकार।
पूजूँ पग तिन भाव लगाय, जासें गुप्तित्रय प्रकटाय॥
ॐ ह्रीं चित्रगुप्तिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ८२॥

चिरभव भ्रमण करत दु:ख सहा, मरण समाधि न कबहूँ लहा।
गुप्ति समाधि शरण को पाय, जजत समाधि प्रकट हो जाय॥
ॐ ह्रीं समाधिगुप्तिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ८३॥

अन्य सहाय बिना जिनराज, स्वयं लेय परमातम राज।
नाथ स्वयम्भू मग शिवदाय, पूजत बाधा सब टल जाय॥
ॐ ह्रीं स्वयंभूजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ८४॥

मानदर्प के नाशनहार, जिन कन्दर्प आत्मबल धार।
दर्प अयोग बुद्धि के काज, पूजूँ अर्घ्य लिये जिनराज॥
ॐ ह्रीं कन्दर्पजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ८५॥

गुण अनन्त ते नाम अनन्त, श्री जयनाथ धरम भगवन्त।
पूजूँ अष्ट द्रव्य कर लाय, विघ्न सकल जासे टल जाय॥
ॐ ह्रीं जयनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ८६॥

पूज्य आत्म गुणधर मलहार, विमलनाथ जग परम उदार।
शील परम पावन के काज, पूजूँ अर्घ्य लेय जिनराज॥
ॐ ह्रीं विमलजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ८७॥

दिव्यवाद अरहन्त अपार, दिव्यध्वनि प्रकटावन हार।
आत्मतत्त्व ज्ञाता सिरताज, पूजूँ अर्घ्य लेय जिनराज॥
ॐ ह्रीं दिव्यवादजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ८८॥

शक्ति अपार आत्म धरतार, प्रगट करें जिन योग संभार।
अनन्तवीर्यनाथ को ध्याय, नतमस्तक पूजूँ हरषाय॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ८९॥

(दोहा)

तीर्थराज चौबीस जिन, भावी भव हरतार।
बिम्ब प्रतिष्ठा कार्य में, पूजूँ विघ्न निवार॥

ॐ ह्रीं बिम्बप्रतिष्ठोद्यापने मुख्यपूजार्हं चतुर्थवलयोन्मुद्रितानागतचतुर्विंशतिमहा-पद्माद्यनन्तवीर्यान्तेभ्यो जिनेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

निरखी-निरखी मनहर मूरति....

निरखी-निरखी मनहर मूरति, तोरी हो जिनन्दा।
खोई-खोई आतम निज निधि, पायी हो जिनन्दा॥ टेक॥

मोह दु:ख का घर है मैंने, आज सरासर देखा है, आज...।
आतम-धन के आगे झूठा, जग का सारा लेखा है, जग...॥
मैं अपने में घुल-मिल जाऊँ, तो पाऊँ जिनन्दा॥ १॥

तू भवनाशी मैं भववासी, भवसागर से तिरना है, भवसागर...।
शुद्धस्वरूपी तुम-सा बनकर, शिवरमणी को वरना है, शिव...॥
मैं अपने में ही रम जाऊँ, वर पाऊँ जिनन्दा॥ २॥

नादानी में अब लौं मैंने, पर को अपना माना है, पर को...।
काया की माया में भूला, खुद नहिं पहिचाना है, खुद...॥
अब भूलों पर रोता ये मन, मोरा हो जिनन्दा॥ ३॥

पञ्चम वलय में विदेहक्षेत्र के २० तीर्थङ्करों की पूजा

(लक्ष्मीधरा)

मोक्षनगरी पति हंस राजा सुतं, पुण्डरीका पुरी राजते दु:खहतम्।
सीमन्धर जिना पूजते दु:खहना, फेर होवे न या जगत में आवना॥
ॐ ह्रीं सीमन्धरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ९०॥

धर्मद्वय वस्तुद्वय नय-प्रमाणद्वयं, नाथ जुगमन्धरं कथितं व्रतद्वयं।
भूपश्री रुह सुतं ज्ञानकेवलगतं, पूजिये भक्ति से कर्मशत्रु हतं॥
ॐ ह्रीं युगमन्धरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ९१॥

भूप सुग्रीव विजया से जाए प्रभू, एण चिह्नं धरे जानते तीन भू।
स्वच्छ सीमापुरी राजते बाहुजिन, पूजिये साधु को राग-रुष दोष बिन॥
ॐ ह्रीं बाहुजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ९२॥

तंशनभ निर्मलं सूर्य सम राजते, कीर्तिमय बन्ध्य क्षेत्र बिन शुभ शोभते।
मात सुन्दर सुनन्दा सु भवभयहतं, पूजते बाहुशुभ भवभय निर्गतम्॥
ॐ ह्रीं सुबाहुजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ९३॥

जन्म अलकापुरी देवसेनात्मजं, पुण्यमय जन्मए नाथ सञ्जातकम्।
पूजिये भाव से द्रव्य आठों लिये, और रस त्याग कर आत्मरस को पिये॥
ॐ ह्रीं सञ्जातकजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ९४॥

जन्मपुर मङ्गला चन्द्र चिह्नं वरे, आप से आप ही भव उदधि उद्धरे।
स्वयं प्रभ पूजते विघ्न सारे टरे, होय मङ्गल महा कर्मशत्रु डरे॥
ॐ ह्रीं स्वयंप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ९५॥

वीरसेना सुमाता सुसीमापुरी, देवदेवी परमभक्ति उर में धरी।
देव ऋषभाननं आननं सार है, देखते पूजते भव्य उद्धार है॥
ॐ ह्रीं ऋषभाननजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ९६॥

वीर्य का पार ना, ज्ञान का पार ना, सुक्ख का पार ना, ध्यान का पार ना।
आप में राजते शान्तमय छाजते, अन्त बिन वीर्य को पूज अघ भाजते॥
ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ९७॥

अङ्कवृष धारते धर्मवृष्टी करें, भाव सन्तापहार ज्ञानसृष्टी करें।
नाथ सूरिप्रभं पूजते दुःखहनं, मुक्तिनारी वरं पादुपे निजघनं॥
ॐ ह्रीं सूरिप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ९८॥

पुण्डरं पुरवरं मात विजया जने, वीर्य राजा पिता ज्ञानधारी तने।
जुग्मचरणं भजे ध्यान इकतान हो, जिन विशालप्रभ पूज अघहान हो॥
ॐ ह्रीं विशालभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ९९॥

वज्रधर जिनवरं पद्मरथ के सुतं, शंखचिह्न धरे मान रूष भय गतं।
मात सरसुति बड़ी इन्द्र सम्मानिता, पूजते जास को पाप सब भाजता॥
ॐ ह्रीं वज्रधरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १००॥

चन्द्र आनन जिनं चन्द्र को जयकरं, कर्म विध्वसकं साधुजन शमकरं।
मात करुणावती नग्र पुण्ड्रीकिनी, पूजते मोह की राजधानी छिनी॥
ॐ ह्रीं चन्द्राननजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १०१॥

श्रीमती रेणुका मात है जास की, पद्मचिह्नं धरे मोह को मात दी।
चन्द्रबाहुजिनं ज्ञानलक्ष्मी धरं, पूजते जास के मुक्तिलक्ष्मी वरं॥
ॐ ह्रीं चन्द्रबाहुजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १०२॥

नाथ निज आत्मबल मुक्तिपथ पग दिया, चन्द्रमाचिह्नधर मोहतम हर लिया।
बलमहाभूपती हैं पिता जास के, भुजङ्गम नाथ पूजें न भव में छके॥
ॐ ह्रीं भुजङ्गमजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १०३॥

मात ज्वाला सती सेन गल भूपती, पुत्र ईश्वर जने पूजते सुरपती।
स्वच्छ सीमानगर धर्म विस्तार कर, पूजते ही प्रकट बोधिमय भास्कर॥
ॐ ह्रीं ईश्वरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १०४॥

नाथ नेमिप्रभं नेमि है धर्मरथ, सूर्यचिह्नं धरें चालते मुक्तिपथ।
अष्टद्रव्य को लिये पूजते अघ हने, ज्ञान वैराग्य से बोधि पावें घने॥
ॐ ह्रीं नेमिप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १०५॥

वीरसेना सुतं कर्मसेना हतं, सेनशूर जिनं इन्द्र से वन्दितम्।
पुण्डरीकं नगर भूमिपालक नृपं, हैं पिता ज्ञानसूरा करूँ मैं जपम्॥
ॐ ह्रीं वीरसेनजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १०६॥

नगर विजया तने देव राजा पती, अर उमामात के पुत्र संशय हती।
जिनमहाभद्र को पूजिये भद्रकर, सर्व मङ्गल करै मोह सन्ताप हर॥
ॐ ह्रीं महाभद्रजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १०७॥

है सुसीमा नगर भूप भूति तवं, मात गङ्गाजन द्योतते त्रिभुवं।
लाक्षणं स्वस्तिकं जिनयशोदेव को, पूजिये वन्दिये मुक्ति गुरुदेव को॥
ॐ ह्रीं यशोदेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १०८॥

पद्मचिह्नं धरे मोह को वश करे, पुत्र राजा कनक क्रोध को क्षय करे।
ध्यान मण्डित महा वीर्य अजितं धरे, पूजते जास को कर्मबन्धन टरे॥
ॐ ह्रीं अजितवीर्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १०९॥

(दोहा)

राजत बीस विदेह जिन, कबहिं साठ शत होय।
पूजत वन्दत जास को, विघ्न सकल क्षय होय॥

ॐ ह्रीं अस्मिन्बिम्बप्रतिष्ठोद्यापने मुख्यपूजार्हपञ्चमवलयोन्मुद्रितविदेहक्षेत्रे सुषष्टि-सहितकैशतजिनेशसंयुक्तनित्यविहरमानविंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

षष्ठम वलय में आचार्य परमेष्ठी के ३६ गुणों की पूजा

(भुजङ्गप्रयात)

हटाये अनन्तानुबंधी कषाये, करण से हैं मिथ्यात तीनों खपाये।
अतीचार पच्चीस को हैं बचाये, सु-आचार दर्शन परम गुरु धराये॥
ॐ ह्रीं दर्शनाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ११०॥

न संशय विपर्यय न है मोह कोई, परम ज्ञान निर्मल धरे तत्त्व जोई।
स्व-पर ज्ञान से भेदविज्ञान धारे, सु-आचार ज्ञानं स्व-अनुभव सम्हारे॥
ॐ ह्रीं ज्ञानाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १११॥

सुचारित्र व्यवहार निश्चय सम्हारे, अहिंसादि पाँचों व्रत शुद्ध धारे।
अचल आत्म में शुद्धता सार पाये, जजूँ पद गुरु के दरब अष्ट लाये॥
ॐ ह्रीं चारित्राचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ११२॥

तपें द्वादशों तप अचल ज्ञानधारी, सहें गुरु परीषह सुसमता प्रचारी।
परम आत्मरस पीवते आप ही तें, भजूँ मैं गुरु छूट जाऊँ भवों तें॥
ॐ ह्रीं तपाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ११३॥

परम ध्यान में लीनता आप कीनी, न हटते कभी घोर उपसर्ग दीनी।
सु-आतमबली वीर्य की ढाल धारी, परम गुरु जजूँ अष्ट द्रव्य सम्हारी॥
ॐ ह्रीं वीर्याचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ११४॥

तपः अनशनं जो तपें धीर-वीरा, तजें चारविध भोजनं शक्ति धीरा।
कभी साम पक्षं कभी चार त्रय दो, सु-उपवास करते जजूँ आप गुण दो॥
ॐ ह्रीं अनशनतपोयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ११५॥

सु ऊनोदरी तप महास्वच्छकारी, करे नींद आलस्य का नाहिं प्रचारी।
सदा ध्यान की सावधानी सम्हारे, जजूँ मैं गुरु को करम-घन विदारें॥
ॐ ह्रीं अवमौदर्यतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ११६॥

कभी भोजन हेतु पुर में पधारें, तभी दृढ़प्रतिज्ञा गुरु आप धारें।
यही वृत्ति-परिसंख्य तप आशहारी, भजूँ जिन गुरु जो कि धारें विचारी॥
ॐ ह्रीं वृत्तिपरिसंख्यानतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ११७॥

कभी छः रसों को कभी चार त्रय दो, तजें राग वर्जन गुरु लोभजित हो।
धरें लक्ष्य आतम सुधा सार पीते, जजूँ मैं गुरु को सभी दोष बीते॥
ॐ ह्रीं रसपरित्यागतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ११८॥

कभी पर्वतों पर गुहा वन मशाने, धरें ध्यान एकान्त में एकताने।
धरें आसना दृढ़ अचल शान्तिधारी, जजूँ मैं गुरु को भरम तापहारी॥
ॐ ह्रीं विविक्तशय्यासनतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ ११९॥

ऋतु उष्ण पर्वत शरद्रतु नदी तट, अधोवृक्ष बरसात में या कि चउ पथ।
करें योग अनुपम सहें कष्ट भारी, जजूँ मैं गुरु को सु-सम-दम पुकारी॥
ॐ ह्रीं कायक्लेशतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १२०॥

करें दोष आलोचना गुरु सकाशे, भरैं दण्ड रुचिसों गुरु जो प्रकाशे।
सुतप अन्तरङ्ग प्रथम शुद्ध कारी, जजूँ मैं गुरु को सु-आतम विहारी॥
ॐ ह्रीं प्रायश्चित्ततपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १२१॥

दरश-ज्ञान चारित्र आदि गुणों में, परम-पदमयी पाँच परमेष्ठियों में।
विनय तप धरें शल्य त्रय को निवारें, हमें रक्ष श्री गुरु जजूँ अर्घ धारें॥
ॐ ह्रीं विनयतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १२२॥

यती संघ दस विध यदि रोग धारें, तथा खेद पीड़ित मुनी हों विचारें।
करें सेव उनकी दया चित्त ठाने, जजूँ मैं गुरु को भरम ताप हाने॥
ॐ ह्रीं वैय्यावृत्तितपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १२३॥

करें बोध निजतत्त्व परतत्त्व रुचि से, प्रकाशें परमतत्त्व जग को स्वमति से।
यही तप अमोलक करम को खिरावे, जजूँ मैं गुरु को कुबोधं नशावे॥
ॐ ह्रीं स्वाध्यायतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १२४॥

अपावन विनाशीक निज देह लखके, तजें सब ममत्वं सुधा आत्म चखके।
करें तप सु व्युत्सर्ग सन्तापहारी, जजूँ मैं गुरु को परम-पद विहारी॥
ॐ ह्रीं व्युत्सर्गतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १२५॥

जु है आर्तरौद्रं कुध्यानं कुज्ञानं, उन्हें नहिं धरें ध्यान धर्मं प्रमाणं।
करें शुद्ध उपयोग कर्मप्रहारी, जजूँ मैं गुरु को स्व-अनुभव सम्हारी॥
ॐ ह्रीं ध्यानावलम्बननिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १२६॥

करै कोय बाधा वचन दुष्ट बोले, क्षमा ढाल से क्रोध मन में न कुछ ले।
धरैं शक्ति अनुपम तदपि शाम्बधारी, जजूँ मैं गुरु को स्वधर्मप्रचारी॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमापरमधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १२७॥

धरै मद न तप ज्ञान आदि स्वमन में, नरम चित्त से ध्यान धारें सु वन में।
परम मार्दव धर्म सम्यक् प्रचारी, जजूँ मैं गुरु को सुधा ज्ञान धारी॥
ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मधुरन्धराचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १२८॥

परम निष्कपट चित्त भूमी सम्हारे, लता धर्मवर्धन करें शान्ति धारें।
करम अष्ट हन मोक्ष फल को विचारें, जजूँ मैं गुरु को श्रुत ज्ञान धारें॥
ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मपरिपुष्टाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १२९॥

न रुष लोभ भय हास्य नहिं चित्त धारें, वचन सत्य आगम प्रमाणी उचारें।
परम हित सु मित मिष्टवाणी प्रचारी, जजूँ मैं गुरु को सुत समता विहारी॥
ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मप्रतिष्ठिताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १३०॥

न है लोभ राक्षस न तृष्णा पिशाची, परम शौच धारें सदा जो अजाची।
करैं आत्मशोभा स्व सन्तोष धारी, जजूँ मैं गुरु को भवातापहारी॥
ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १३१॥

न संयम विराधें करैं प्राणिरक्षा, दमैं इन्द्रियों को मिटावें कु-इच्छा।
निजानन्द राचें खरे संयमी हो, जजूँ मैं गुरु को यमी अरु दमी हो॥
ॐ ह्रीं उत्तमद्विविधसंयमपात्राचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १३२॥

तपो भूषणं धारते यति विरागी, परमधाम सेवी गुणग्राम त्यागी।
करें सेव तिनकी सु इन्द्रादि देवा, जजूँ मैं चरण को लहूँ ज्ञान मेवा॥
ॐ ह्रीं उत्तमतपोऽतिशयधर्मसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १३३॥

अभयदान देते परम ज्ञान दाता, सुधर्मौषधी बाँटते आत्म त्राता।
परमत्याग-धर्मी परमतत्त्व मर्मी, जजूँ मैं गुरु को शमूँ कर्म गर्मी॥
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मप्रवीणाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १३४॥

न परवस्तु मेरी, न सम्बन्ध मेरा, अलख गुण निरञ्जन शमी आत्म मेरा।
यही भाप अनुपम प्रकाशे सुध्यानं, जजूँ मैं गुरु को लहूँ शुद्ध ज्ञानं॥
ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चनधर्मसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १३५॥

परम शीलधारी निजारामचारी, न रंभा सु नारी करें मन विकारी।
परम ब्रह्मचर्या चलत एक तानं, जजूँ मैं गुरु को सभी पापहानं॥
ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्ममहनीयाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १३६॥

मनः गुप्तिधारी विकल्पप्रहारी, परमशुद्ध उपयोग में नित विहारी।
निजानन्दसेवी परमधाम देवी, जजूँ मैं गुरु को धरमध्यान टेवी॥
ॐ ह्रीं मनोगुप्तिसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १३७॥

वचन गुप्तिधारी महासौख्यकारी, करें धर्म उपदेश संशय निवारी।
सुधासार पीते धरमध्यान धारी, जजूँ मैं गुरु को सदा निर्विकारी॥
ॐ ह्रीं वचनगुप्तिधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १३८॥

अचल ध्यानधारी खड़ी मूर्ति प्यारी, खुजावें मृगी अङ्ग अपना सम्हारी।
धरी कायगुप्ति निजानन्दधारी, जजूँ मैं गुरु को सु समता प्रचारी॥
ॐ ह्रीं कायगुप्तिसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १३९॥

परम साम्यभावं धरें जो त्रिकालं, भरम राग द्वेषं मदं मोह टालं।
पिबैं ज्ञान रस शान्ति समता प्रचारी, जजूँ मैं गुरु को निजानन्द धारी॥
ॐ ह्रीं सामायिकावश्यककर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४०॥

करैं वन्दना सिद्ध अरहन्त देवा, मगन नित गुणों में रहें सार लेवा।
उन्हीं-सा निजातम जु अपना विचारें, जजूँ मैं गुरु को धरम ध्यान धारें॥
ॐ ह्रीं वन्दनावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४१॥

करें संस्तवं सिद्ध अरहन्त देवा, करें गान गुण का लहें ज्ञान मेवा।
करें निर्मलं भाव को पाप नाशें, जजूँ मैं गुरु को सु-समता प्रकाशें॥
ॐ ह्रीं स्तवनावश्यकसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४२॥

लगे दोष तन-मन-वचन के फिरन से, कहें गुरु समीपे परमशुद्ध मन से।
करें प्रतिक्रमण अर लहें दण्ड सुख से, जजूँ मैं गुरु को छुटूँ सर्व दुःख से॥
ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४३॥

करें भावना आत्म की ज्ञान ध्यावें, पढ़ें शास्त्र रुचि से सुबोधं बढ़ावें।
यही ज्ञान सेवा करममल छुड़ावें, जजूँ मैं गुरु को अबोधं हटावे॥
ॐ ह्रीं स्वाध्यायावश्यककर्मनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४४॥

तजें सब ममत्वं शरीरादि सेती, खड़े आत्मध्यावें छुटे कर्म-रेती।
लहैं ज्ञान भेदं सु-व्युत्सर्ग धारें, जजूँ मैं गुरु को स्व-अनुभव विचारें॥
ॐ ह्रीं व्युत्सर्गावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४५॥

(दोहा)

गुण अनन्त धारी गुरु, शिवमग चालनहार।
संघ सकल रक्षा करें, यज्ञ विघ्न हरतार॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोद्यापने पूजार्हमुख्यषष्टवलयोन्मुद्रिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४६॥

सप्तम वलय में उपाध्याय परमेष्ठी के २५ गुणों की पूजा

(द्रुतविलम्बित)

प्रथम अङ्ग कथत आचार को, सहस अष्टादश पद धारतो।
पढ़त साधु सु अन्य पढ़ावते, जजूँ पाठक को अति चाव से॥
ॐ ह्रीं अष्टादशसहस्रपदसंयुक्ताचाराङ्गज्ञाता उपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४६॥

द्वितीय सूत्रकृताङ्ग विचारते, स्व-पर तत्त्व सु निश्चय लावते।
पद छत्तीस हजार विशाल हैं, जजूँ पाठक शिष्य दयालु हैं॥
ॐ ह्रीं षट्त्रिंशत्सहस्रपदसंयुक्तसूत्रकृताङ्गज्ञाता उपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४७॥

तृतीय अङ्ग स्थान छः द्रव्य को, पद हजार बियालिस धारतो।
एक द्वै त्रय भेद बखानता, जजूँ पाठक तत्त्व पिछानता॥
ॐ ह्रीं द्विचत्वारिंशत्पदसंयुक्तस्थानाङ्गज्ञाता उपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४८॥

द्रव्य क्षेत्र समय अर भाव से, साम्य झलकावे विस्तार से।
लख सहस्र चौंसठ पद धारता, जजूँ पाठक तत्त्व विचारता॥
ॐ ह्रीं एकलक्षचतुर्षष्टिपदन्याससहस्रसमवायाङ्गज्ञाता उपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १४९॥

प्रश्न साठ हजार बखानता, सहस अठविंशति पद धारता।
द्विलख और विशद परकाशता, जजूँ पाठक ध्यान सम्हारता॥
ॐ ह्रीं द्विलक्षाष्टविंशतिसहस्रपदरंजितव्याख्याप्रज्ञप्त्यंगज्ञाता उपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १५०॥

धर्मचर्चा प्रश्नोत्तर करे, पाँच लाख सहस छप्पन धरे।
पद सु मध्यम ज्ञान बढ़ावता, जजूँ पाठक आतम ध्यावता॥
ॐ ह्रीं पंचलक्षषट्पंचाशत्सहस्रपदसङ्गतज्ञातृधर्मथाङ्गधारके उपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १५१॥

व्रत सुशील क्रिया गुण श्रावका, पद सुलक्ष इग्यारह धारका।
सहस सप्तति और मिलाइये, जजूँ पाठक ज्ञान बढ़ाइये॥
ॐ ह्रीं एकादशलक्षसप्ततिसहस्रपदशोभितोपासकाध्ययनाङ्गधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १५२॥

दश यती उपसर्ग सहन करें, समय तीर्थङ्कर शिवतिय वरें।
सहस अठाइस लख तेइसा, पद यजूँ पाठक जिन सारिसा॥
ॐ ह्रीं त्रिविंशतिलक्षाष्टविंशतिसहस्रपदशोभितान्तःदशाङ्गधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १५३॥

दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थ अनुसार अवतरे।
सहस चव चालिस लख बानवे, पद धरें पाठक बहु ज्ञान दे॥
ॐ ह्रीं द्विनवतिलक्षचतुर्चत्वारिंशत्पदशोभितानुत्तरोपपादिकांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १५४॥

प्रश्नव्याकरणांग महान ये, सहस्र सोलह लाख तिरानवे।
पद धरे सुखसु विचारता, जजूँ पाठक धर्म प्रचारता॥
ॐ ह्रीं त्रिनवतिलक्षषोडशसहस्रपदशोभितप्रश्नव्याकरणांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १५५॥

सहस चवरसि कोटि एक पद, धरत सूत्रविपाक सुज्ञान पद।
करम-बन्ध उदय सत्त्वादिकं, जजूँ पाठक जीते कामरथं॥
ॐ ह्रीं एककोटिचतुरशीतिसहस्रपदशोभितविपाकसूत्रांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १५६॥

कथत षट् द्रव्यों की सारता, एक कोटि पद को धारता।
पूर्व है उत्पाद सु जानकर, जजूँ पाठक निज रुचि ठान कर॥
ॐ ह्रीं उत्पादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १५७॥

सुनय दुर्नय आदि प्रमाणता, नवति छह कोटि पद धारता।
पूर्व अग्रायण विस्तार हैं, जजूँ पाठक भवदधि तार हैं॥
ॐ ह्रीं अग्रायणीपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १५८॥

द्रव्य-गुण-पर्यय बल कथत है, लाख सत्तर पद यह धरत है।
पूर्व है अनुवाद सु वीर्य का, जजूँ पाठक यति पद धारका॥
ॐ ह्रीं वीर्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १५९॥

नास्ति अस्ति प्रवाद सुअंग है, साठ लख मध्यम पद संग है।
सप्तभंग कथत जिनमार्ग कर, जजूँ पाठक मोह निवारकर॥
ॐ ह्रीं अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १६०॥

ज्ञान आठ सुभेद प्रकाशता, एक कम कोटी पद धारता।
सतत ज्ञानप्रवाद विचारता, जजूँ पाठक संशय टारता॥
ॐ ह्रीं आत्मज्ञानप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १६१॥

कथत सत्य असत्य सुभाव को, कोटि अरु पद धारी पूर्व को।
पढ़त सत्यप्रवाद जिनागमा, जजूँ पाठक ज्ञाता आगमा॥
ॐ ह्रीं सत्यप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १६२॥

सकल जीव स्वरूप विचारता, कोटि पद छब्बीस सुधारता।
पढ़त आत्मप्रवाद महान को, जजूँ पाठक दुर्मति हान को॥
ॐ ह्रीं आत्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १६३॥

कर्मबंध विधान बखानता, कोटि पद अस्सीलख धारता।
पढ़त कर्म प्रवाद सुध्यान से, जजूँ पाठक शुद्ध विधान से॥
ॐ ह्रीं कर्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १६४॥

नय प्रमाण सुन्यास विचारता, लाख पद चौरासी धारता।
पूर्व प्रत्याहार जु नाम है, जजूँ पाठक रमताराम है॥
ॐ ह्रीं प्रत्याहारपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १६५॥

मन्त्र विद्याविधि को साधता, लक्ष दशकोटि पद धारता।
पूर्व हैं अनुवाद सुज्ञान का, जजूँ पाठक सन्मति दायका॥
ॐ ह्रीं विद्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १६६॥

पुरुष त्रेसठ आदि महान का, कथत वृत्त सकल कल्याण का।
कोटि छब्बीस पद को धारता, जजूँ पाठक अर्घ्यं सब टारता॥
ॐ ह्रीं कल्याणवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १६७॥

कथत भेद सुवैद्यक शास्त्र का, कोटि तेरह पद कारका।
पूर्व नाम सुप्राणप्रवाद है, जजूँ पाठक सुर नत पाद है॥
ॐ ह्रीं प्राणप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १६८॥

कथत छंदकला संगीत को, कोटि नव पद मध्यम रीत को।
पूर्व नाम सु क्रियाविशाल है, जजूँ पाठक दीनदयाल है॥
ॐ ह्रीं क्रियाविशालपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १६९॥

तीन लोक विधानविचारता, कोटि अर्द्ध सु द्वादश धारता।
पूर्व बिन्दु त्रैलोक्य विशाल है, जजूँ पाठक करत निहाल है॥
ॐ ह्रीं त्रैलोक्यबिन्दुपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १७०॥

(दोहा)

अंग इकादश पूर्व दश, चार सुज्ञायक साध।
जजूँ गुरु के चरण दो, यजत सु अव्याबाध॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठामहोत्सवविधाने मुख्यपूजार्हसप्तमवलयोन्मुद्रितद्वादशांगश्रुत-देवताभ्यस्तदाराधकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं भी संस्तुति करता हूँ प्रभु, अल्पबुद्धि हूँ ज्ञान नहीं।
विज्ञजनों से पूजित स्वामी, मुझको तो कुछ भान नहीं॥

जैसे बालक जलसंस्थित शशि पाने की इच्छा करता।
मेरा मन भी तव दर्शन की ही दृढ़ प्रबलेच्छा करता॥

संस्तुतियाँ अनगिनती हैं पर, भावशून्य सब ही बेकार।
भावसहित यदि एकमात्र हो, तो हो जाता बेड़ा पार॥

अष्टम वलय में साधु परमेष्ठी के २८ मूलगुणों की पूजा

(नाराच)

तजे सु राग-द्वेष भाव शुद्धभाव धारते,
परम स्वरूप आपका समाधि से विचारते।
करैं दया सुप्राणि जन्तु चर अचर बचावते,
जजों यति महान प्राणिरक्षव्रत निभावते॥

ॐ ह्रीं अहिंसामहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १७१॥

असत्य सर्व त्याग वाक् शुद्धता प्रचारते,
जिनागमानुकूल तत्त्व सत्य सत्य धारते।
अनेक नय प्रकार से वचन विरोध टारते,
जजों यति महान सत्यव्रत सदा सम्हारते॥

ॐ ह्रीं अनृतपरित्यागमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १७२॥

अचौर्यव्रत महान धार शौचभाव भावते,
जजों यती सदा सुज्ञान ध्यान मन रमावते।
सुतृप्त हैं महान आत्मजन्य सौख्य पावते,
जजौं यती सदा सु ज्ञान ध्यान मन रमावते॥

ॐ ह्रीं अचौर्यमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १७३॥

सु ब्रह्मचर्यव्रत महान धार शील पालते,
न काष्ठमय कलत्र देव भामिनी विचारते।
मनुष्यणी सु पशुतियाँ कभी न मन रमावते,
जजों यती न स्वप्नमाहिं शील को गमावते॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १७४॥

न राग द्वेष आदि अन्तरङ्ग सङ्ग धारते,
न क्षेत्र आदि बाह्य सङ्ग रङ्ग भी सम्हारते।
धरें सु साम्यभाव आप, पर पृथक् विचारते,
जजों यती ममत्वहीन साम्यता प्रचारते॥
ॐ ह्रीं परिग्रहत्यागधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १७५॥

सु चार हाथ भूमि अग्र देश पाय धारते,
न जीवघात होय यत्न सार मन विचारते।
सु चार मास वृष्टि काल एक थल विराजते,
जजूँ यती सु सन्मति जो ईर्या सम्हारते॥
ॐ ह्रीं ईर्यासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १७६॥

न क्रोध लोभ हास्य भय कराय साम्य धारते,
वचन सुमिष्ट इष्ट मित प्रमाण ही निवारते।
यथार्थ शास्त्र ज्ञान का सुधा-सु आत्म पीवते,
जजूँ यतीश द्रव्य आठ तत्त्व माहिं जीवते॥
ॐ ह्रीं भाषासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १७७॥

महान दोष छ्यालिसों सु टार ग्रास लेत हैं,
पड़े जु अन्तराय तुरत ग्रास त्याग देत हैं।
मिले जु भोग पुण्य से उसी में सब्र धारते,
जजूँ यतीश काम जीत राग-द्वेष टारते॥
ॐ ह्रीं एषणासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १७८॥

धरें उठाय वस्तु देख शोध खूब लेत हैं,
न जन्तु कोय कष्ट पाय, इम विचार लेत हैं।
अतः सु मोर पिच्छिका सुमाजिका सु धारते,
जजूँ यती दयानिधान, जीव दुःख टारते॥
ॐ ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १७९॥

धरैं जु अङ्ग नेत्र नासिकादि मल सु देख के,
न होय जन्तु घात थान शुद्धता सुपेख के।
परम दया विचार सार व्युत्सर्ग साधते,
जजूँ यतीश चाह दाह शान्ति-पय बुझावते॥
ॐ ह्रीं व्युत्सर्गसमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १८०॥

न उष्ण शीत मृदु कठिन गुरु लघु सपर्शते,
न चीकनेऽरु रूक्ष वस्तु से मिलाप पावते।
न रागद्वेष को करें, समान भाव धारते,
जजूँ यती दमे सपर्श ज्ञान भाव सारते॥
ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १८१॥

न मिष्ट तिक्त लौण कटुक, आत्म स्वाद चाहते,
करत न राग-द्वेष शौच भाव को निवाहते।
सु जान के सु-भाव पुद्गलादि साम्य धारते,
जजूँ यती सदा जु चाह दाह को निवारते॥
ॐ ह्रीं रसनेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १८२॥

जगत पदार्थ पुद्गलादि आत्म गुण न त्यागते,
सुगन्ध गन्ध दु:खदाय साधु जहँ पावते।
न राग-द्वेष धार घ्राण का विषय निवारते,
जजूँ यतीश एक रूप शान्तता प्रचारते॥
ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १८३॥

सफेद लाल कृष्ण पीत नील रंग देखते,
स्वरूप औ कुरूप देख वस्तु रूप पेखते।
करें न राग-द्वेष साम्यभाव को सम्हारते,
जजूँ यती महान चक्षु राग को निवारते॥
ॐ ह्रीं चक्षुरिन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १८४॥

करे थुती बनाय एक गद्य पद्य सारते,
कहे असभ्य बात एक क्रूरता प्रसारते।
न रोष तोष धारते पदार्थ को विचारते,
जजूँ यती महान कर्ण राग-द्वेष टारते॥
ॐ ह्रीं श्रोतेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १८५॥

धरें महान शांतता न राग-द्वेष भावते,
चलें नहीं सुयोग से विराट कष्ट आवते।
तरें समुद्र कर्म को जहाज ध्यान खेवते,
जजूँ यती स्वरूप माँहि बैठ तत्त्व बेवते॥
ॐ ह्रीं सामायिकावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १८६॥

करें त्रिकाल वन्दना सु पूज्य शुद्ध साधु को,
विचार बार-बार आत्म शुद्ध गुण स्वभाव को।
करें जु नाश कर्म जो कि मोक्षमार्ग रोकते,
जजूँ यती महान माथ नाय नाय ढोकते॥
ॐ ह्रीं वन्दनावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १८७॥

करें सुगान गुण अपार तीर्थनाथ देव के,
मन पिशाच की विडार स्वात्मसार सेव के।
बनाय शुद्ध भाव माल आत्मकण्ठ डारते,
जजूँ यती महान कर्म आठ चूर डारते॥
ॐ ह्रीं स्तवनावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १८८॥

करें विचार दोष होय नित्य कार्य साधते,
क्षमा कराय सर्व जन्तु जाति कष्ट पावते।
आलोचना सुकृत्य से स्वदोष को मिटावते,
जजूँ यती महान ज्ञान अम्बु में नहावते॥
ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १८९॥

रखैं सुबाँध मन-कपी, महान है जु नटखटा,
बाँध साँकलान शास्त्र पाठ में जुटावता।
धरैं स्वभाव शुद्ध नित्य आत्म को रमावते,
जजूँ यती उदय महान ज्ञानसूर्य पावते॥
ॐ ह्रीं स्वाध्यायावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९०॥

तजैं ममत्व काय का इसे अनित्य जानते,
जु काँच खण्ड मृत्तिका सु पिण्ड सम प्रमाणते।
खड़े बनी गुफा महा स्व-ध्यान सार धारते,
जजूँ यती महान मोह राग-द्वेष टारते॥
ॐ ह्रीं कायोत्सर्गावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९१॥

करैं शयन सु भूमि में कठोर कंकड़ानि की,
कभी नहीं विचारते, पलंग खाट पालकी।
मुहूर्त एक भी नहीं गमावते कुनींद में,
जजूँ यतीश सोचते सु आत्मतत्त्व नींद में॥
ॐ ह्रीं भूशयननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९२॥

करैं नहीं नहान सर्व राग देह का हते,
पसेव ग्रीष्म में पड़े न शीत अम्बु चाहते।
बनी प्रबल पवित्र और मन्त्र शुद्ध धारते,
जजूँ यतीश शुद्ध पाद कर्म मैल टारते॥
ॐ ह्रीं अस्माननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९३॥

करैं नहीं कबूल छाल वस्त्र खण्ड धोवती,
दिगानि वस्त्र धार लाज सङ्ग त्याग रोवती।
बने पवित्र अङ्ग शुद्ध बाल से विचार हैं,
जजूँ यतीश काम जीत शील खड्ग धार हैं॥
ॐ ह्रीं सर्वथावस्त्रत्यागनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९४॥

करैं सु केशलोंच मुष्टि मुष्टि धैर्य भावते,
लखाय जन्म जन्तु का स्व-केश ना बढ़ावते।
ममत्व देह से नहीं, न शस्त्र से नुचावते,
जजूँ यती स्वतन्त्रता विहार चित रमावते॥

ॐ ह्रीं कृतकेशलोचननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९५॥

करैं न दन्तवन कभी, तजा सिंगार अङ्ग का,
लहें स्व-खान-पान एक बार साध्य अङ्ग का।
तथापि दन्त कर्णिका महान ज्योति त्यागती,
जजूँ यतीश शुद्धता अशुद्धता निवारती॥

ॐ ह्रीं दन्तधोवनवर्जननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९६॥

धरैं न चाह भोग, रोग के समान जानते,
शरीर रक्ष काज़ एक बार भुक्त ठानते।
सकल दिवस सु ध्यान शास्त्र पाठ में बितावते,
जजूँ यती अलाभ अन्न लाभ-सा निभावते॥

ॐ ह्रीं एकभुक्तिनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९७॥

खड़े रहें सुलेय अन्न देहशक्ति देखते,
न होय बल विहार तब मरण समाधि पेखते।
करें सु आत्मध्यान भी खड़े-खड़े पहाड़ पर,
जजूँ यती विराजते निजानुभव चटान पर॥

ॐ ह्रीं अस्थितभोजननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९८॥

(दोहा)

अठविंशति गुण धर यती, शील कवच सरदार।
रत्नत्रय भूषण धरें, टारें कर्म प्रहार॥

ॐ ह्रीं अस्मिन्बिम्बप्रतिष्ठोत्सवे मुख्यपूजार्हअष्टमवलयोन्मद्रितसाधुपरमेष्ठिभ्यस्तन्मूल-गुणग्राह्यभ्यश्च पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९४॥

नवम वलय में ४८ ऋद्धिधारी मुनीश्वरों की पूजा

(दोहा)

लोकालोक प्रकाश कर, केवलज्ञान विशाल।
जो धारें तिन चरण को, पूजूँ नमूँ निज भाल॥

ॐ ह्रीं सकललोकालोकप्रकाशनिरावरणकैवल्यलब्धिधारकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ १९९॥

वक्र सकल पर चित्तगत, मनपर्यय जानेय।
ऋजु विपुलमति भेद धर, पूजूँ साधु सुध्येय॥

ॐ ह्रीं ऋजुमतिविपुलमतिमनः पर्ययधारकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २००॥

देश परम सर्वा अवधि, क्षेत्र काल मर्याद।
द्रव्य-भाव को जानता, धारक पूजूँ साध॥

ॐ ह्रीं अवधिधारकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २०१॥

कोष्ठ धरे बीजानि को, जानत जिम क्रमवार।
तिम जानत ग्रन्थार्थ को, पूजूँ ऋषिगुण सार॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २०२॥

ग्रन्थ एक पद ग्रह कहीं, जानत सब पद भाव।
बुद्धि पाद अनुसारि धर, साधु जजूँ धर भाव॥

ॐ ह्रीं पादानुसारिबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २०३॥

एक बीज पद जानके, कोटिक पद जानेय।
बीज बुद्धिधारी, मुनी, पूजूँ द्रव्य सुलेय॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २०४॥

चक्री सेना नर पशु, नाना शब्द करात।
पृथक् पृथक् युगपत सुने, पूजूँ यति भय जात॥

ॐ ह्रीं संभिन्नसंश्रोत्रऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २०५॥

गिरि सुमेरु रविचन्द्र को, कर पद से छू जात।
शक्ति महान् धारी यती, पूजूँ पाप नशात॥
ॐ ह्रीं दूरस्पर्शशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २०६॥

दूर-क्षेत्र मिष्ठान्न फल, स्वाद लेन बल धार।
न वांछा रस लेन की, जजूँ साधु गुणधार॥
ॐ ह्रीं दूरास्वादनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २०७॥

घ्राणेन्द्रिय मर्याद से, अधिक क्षेत्र गन्धान।
जान सकत जो साधु हैं, पूजूँ ध्यान कृपान॥
ॐ ह्रीं दूरघ्राणविषयग्राहकशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २०८॥

नेत्रेन्द्रिय का विषय बल, जो चक्री जानन्त।
तातें अधिक सुजानते, जजूँ साधु बलवन्त॥
ॐ ह्रीं दूरावलोकनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २०९॥

कर्णेन्द्रिय नव योजना, शब्द सुनत चक्रीश।
तातें अधिक श्रुशक्तिधर, पूजूँ चरण मुनीश॥
ॐ ह्रीं दूरश्रवणशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २१०॥

बिन अभ्यास मुहूर्त में, पढ़ जानत दश पूर्व।
अर्थ भाव सब जानते, पूजूँ यती अपूर्व॥
ॐ ह्रीं दशपूर्वित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २११॥

चौदह पूर्व मुहूर्त में, पढ़ जानत अविकार।
भाव अर्थ समझें सभी, पूजूँ साधु चितार॥
ॐ ह्रीं चतुर्दशपूर्वित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २१२॥

बिन उपदेश सुज्ञान लहि, संयम विधि चालन्त।
बुद्धि अमल प्रत्येक धर, पूजूँ साधु महन्त॥
ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्धित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २१३॥

न्याय शास्त्र आगम बहू, पढ़े बिना जानन्त।
परवादी जीतें सकल, पूजूँ साधु महन्त॥

ॐ ह्रीं वादित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २१४॥

अग्नि पुष्प तन्तु चलें, जंघा श्रेणी चाल।
चारणऋद्धि महानि धर, पूजूँ साधु विशाल॥

ॐ ह्रीं जलजंघातन्तुपुष्पपत्रबीजश्रेणिबहून्यादिनिमित्ताश्रयचारणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २१५॥

नभ में उड़कर जात हैं, मेरु आदि शुभ थान।
जिन वन्दत भवि बोधते, जजूँ साधु सुख खान॥

ॐ ह्रीं आकाशगमनशक्तिचारणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २१६॥

अणिमा महिमा आदि बहु, भेद विक्रिया ऋद्धि।
धरैं करैं न विकारता, जजूँ यती समृद्धि॥

ॐ ह्रीं अणिमामहिमालघिमागरिमाप्राप्तिप्राकाम्यवशित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २१७॥

अन्तर्दधि कामेच्छ बहु, ऋद्धि विक्रिया जान।
तप प्रभाव उपजे स्वयं, जजूँ साधु अघहान॥

ॐ ह्रीं विक्रियाऽन्तर्धानादिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २१८॥

मास पक्ष दो चार दिन, करत रहें उपवास।
आमरणं तप उग्र धर, जजूँ साधु गुणवास॥

ॐ ह्रीं उग्रतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २१९॥

घोर कठिन उपवास धर, दीप्तमयी तन धार।
सुरभि श्वास दुर्गन्ध बिन, जजूँ यती भव पार॥

ॐ ह्रीं दीप्तऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २२०॥

अग्निमाहिं जलसम विलाय, भोजन पय हो जाय।
मल-कफ-मूत्र न परिणमें, जजूँ यती उमगाय॥

ॐ ह्रीं तप्ततपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २२१॥

मुक्तावली महान तप, कर्मन नाशन हेतु।
करते रहें उत्साह से, जजूँ साधु सुख हेतु।
ॐ ह्रीं महातपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २२२॥

कासश्वास ज्वरगृसित हो, अनशन तपगिरि साध।
दुष्टन कृत उपसर्ग सह, पूजूँ साधु अवाध॥
ॐ ह्रीं घोरतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २२३॥

घोर-घोर तप करत भी, होत न बल से हीन।
उत्तर गुण विकसित करें, जजूँ साधु निज लीन॥
ॐ ह्रीं घोरपराक्रमऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २२४॥

दुष्ट स्वप्न दुर्मति सकल, रहित शील गुण धार।
परमब्रह्म अनुभव करें, जजूँ साधु अविकार॥
ॐ ह्रीं घोरब्रह्मचर्यगुणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २२५॥

सकल शास्त्र चिन्तन करें, एक मुहूर्त मँझार।
घटत न रुचि मन वीरता, जजूँ यती भवतार॥
ॐ ह्रीं मनोबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २२६॥

सकल शास्त्र पढ़ जात है, एक मुहूर्त मँझार।
प्रश्नोत्तर कर कण्ड शुचि, धरत यजूँ हितकार॥
ॐ ह्रीं वचनबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २२७॥

मेरु शिखर राखन बली, मास वर्ष उपवास।
घटै न शक्ति शरीर की, यजूँ साधु सुखवास॥
ॐ ह्रीं कायबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २२८॥

अँगुलि आदि सपर्शते, श्वास पवन छू जाय।
रोग सकल पीड़ा टले, जजूँ साधु सुखपाय॥
ॐ ह्रीं आमर्षौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २२९॥

मुखतें उपजे लार जिन, शमन रोग करतार।
परम तपस्वी वैद्य शुभ, जजूँ साधु अविकार॥
ॐ ह्रीं क्ष्वैलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २३०॥

तन पसेव सह रज उड़े, रोगीजन छू जाय।
रोग सकल नाशे सही, जजूँ साधु उमगाय॥
ॐ ह्रीं जलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २३१॥

नाक आँख कर्णादि मल, तन स्पर्श हो जाय।
रोगी रोग शमन करें, जजूँ साधु सुख पाय॥
ॐ ह्रीं मलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २३२॥

मल निपात पर्शी पवन, रजकण अङ्ग लगाय।
रोग सकल क्षण में हरे, जजूँ साधु अघ जाय॥
ॐ ह्रीं विजौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २३३॥

तन नश केश मलादि बहु, अङ्ग लगी पवनादि।
हरै मृगी सूलादि बहु, जजूँ साधु भववादि॥
ॐ ह्रीं सर्वौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २३४॥

विष मिश्रित आहार भी, जहँ निर्विष हो जाय।
चरण धरें भू अमृती, जजूँ साधु दुःख जाय॥
ॐ ह्रीं आस्याविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २३५॥

पड़त दृष्टि जिनकी जहाँ, सर्वहिं विष टल जाय।
आत्मरसी शुचि संयमी, पूजूँ ध्यान लगाय॥
ॐ ह्रीं दृष्ट्यविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २३६॥

मरण होय तत्काल यदि, कहें साधु मर जाव।
तदपि क्रोध करते नहीं, पूजूँ बल दरशाव॥
ॐ ह्रीं आस्याविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २३७॥

दृष्टि क्रूर देखें यदी, तुरत काल वश थाय।
निज पर सुखकारी यती, पूजूँ शक्ति धराय॥
ॐ ह्रीं दृष्टिविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २३८॥

नीरस भोजन कर धरे, क्षीर समान बनाय।
क्षीरस्रावी ऋद्धि धरे, जजूँ साधु हरषाय॥
ॐ ह्रीं क्षीरश्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २३९॥

वचन जस पीड़ा हरे, कटु भोजन मधुराय।
मधुस्रावी ऋद्धि धरे, जजूँ साधु उमगाय॥
ॐ ह्रीं मधुस्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २४०॥

रुक्ष अन्न कर में धरे, घृत रस पूरण थाय।
धृतस्रावी वर ऋद्धिवर, जजूँ साधु सुख पाय॥
ॐ ह्रीं घृतस्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २४१॥

रूक्षकटुक भोजन धरे, अमृत सम हो जाय।
अमृत-सम वच तृप्ति कर, जजूँ साधु भय जाय॥
ॐ ह्रीं अमृतश्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २४२॥

दत्त साधु भोजन बचे, चक्री कटक जिमाय।
तदपि क्षीण होवे नहीं, जजूँ साधु हरषाय॥
ॐ ह्रीं अक्षीणमहानऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २४३॥

सकुड़े थानक में यती, करते वृष उपदेश।
बैठे कोटिक नर पशु, जजूँ साधु परमेश॥
ॐ ह्रीं अक्षीणमहालयऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २४४॥

या प्रमाण ऋद्धीन को, पावत तप परभाव।
चाह कछू राखत नहीं, जजूँ साधु धर भाव॥
ॐ ह्रीं सकलऋद्धिसम्पन्नसर्वमुनिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २४५॥

(दोहा)

चौदह सौ त्रेपन मुनी, गणी तीर्थ चौबीस।
जजूँ द्रव्य आठों लिये, नाय नाय निज शीस॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थेश्वराग्रिमसमावर्तित्रिपंचाशच्चतुर्दशशतगणधरमुनिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २४६॥

अड़तालीश हजार अर, उन्निस लक्ष प्रमान।
तीर्थङ्कर चौबीस यति, संघ यजूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थङ्करसभासंस्थायि एकोनविंशल्लक्षाष्टचत्वारिंशत्सहस्र-प्रमितमुनीन्द्रेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

परम दिगम्बर मुनिवर देखे....

परम दिगम्बर मुनिवर देखे, हृदय हर्षित होता है।
आनन्द उल्लसित होता है, होऽऽऽ सम्यग्दर्शन होता है॥ टेक॥

वास जिनका वन उपवन में, गिरि शिखर के नदी तटे।
वास जिनका चित्त गुफा में, आतम आनन्द में रमें॥ १॥

कञ्चन अरु कामिनी के त्यागी, महा तपस्वी ज्ञानी ध्यानी।
काया की माया के त्यागी, तीन रतन गुण भण्डारी॥ २॥

परम पावन मुनिवरों के, पावन चरणों में नमूँ।
शान्त मूर्ति सौम्य मुद्रा, आतम आनन्द में रमूँ॥ ३॥

चाह नहीं है राज्य की, चाह नहीं है रमणी की।
चाह हृदय में एक यही है, शिवरमणी को वरने की॥ ४॥

भेद-ज्ञान की ज्योति जलाकर, शुद्धातम में रमते हैं।
क्षण-क्षण में अन्तर्मुख हो, सिद्धों से बातें करते हैं॥ ५॥

चार कोनों में स्थापित जिनप्रतिमा, मन्दिर, शास्त्र व जिनधर्म के अर्घ्य

(दोहा)

नौसे पच्चिस कोटि लख, त्रेपन अट्ठावीस।
सहस ऊन कर बावना, बिम्ब प्रकृत नम शीस॥

ॐ ह्रीं नवशतपंचविंशतिकोटित्रिपंचाशल्लक्षाष्टविंशतिसहस्रनवशताष्टचत्वारिंशत्प्रमित-अकृत्रिमजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २४७॥

आठ कोड़ लख छप्पने, सत्तानवे हजार।
चारि शतक इक असी जिन, चैत्य प्रकृत भज-सार॥

ॐ ह्रीं अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिसंख्याकृत्रिम-जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २४८॥

(चौपाई)

जय मिथ्यात्व नाग को सिंहा, एक पक्ष जलधर को मेहा।
नरक कूपतें रक्षक जाना, भज जिन आगम तत्त्व खजाना॥

ॐ ह्रीं स्याद्वादांकितजिनागमायऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २४९॥

(भुजंगप्रयात)

जिनेन्द्रोक्त धर्म दयाभाव रूपा,
यही द्वैविधा संयमै है अनूपा।
यही रत्नत्रय मय क्षमा आदि दशधा,
यही स्वानुभव पूजिए द्रव्य अठधा॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणोत्तमक्षमादित्रिलक्षणसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपमुनिगृहस्थाचारभेदेन च द्विविधं तथादयारूपत्वानैकरूपजिनधर्माय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा॥ २५०॥

(दोहा)

अर्हत्सिद्धाचार्य गुरु, साधु जिनागम धर्म।
चैत्य चैत्य ग्रह देव नव, यज मण्डल कर सर्म॥

ॐ ह्रीं सर्वयागमण्डलदेवताभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

(अडिल्ल)

सर्व विघ्न क्षय जाय शान्ति बाढ़े सही,
भव्य पुष्टता लहें क्षोभ उपजे नहीं।
पञ्च कल्याणक होंय सबहि मङ्गलकरा,
जासें भवदधि पार लेय शिवधर शिरा॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपत्

तू जाग रे चेतन प्राणी....

तू जाग रे चेतन प्राणी, कर आतम की अगवानी।
जो आतम को लखते हैं, उनकी है अमर कहानी॥ टेक॥

है ज्ञानमात्र निजज्ञायक, जिसमें हैं ज्ञेय झलकते।
यह झलकन भी ज्ञायक है, इसमें नहिं ज्ञेय महकते।
मैं दर्शन-ज्ञान स्वरूपी, मेरी चैतन्य निशानी॥

अब समकित सावन आया, चिन्मय आनन्द बरसता।
भीगा है कण-कण मेरा, हो गयी अखण्ड सरसता।
समकित के मधु चितवन में, झलकी है मुक्ति निशानी॥

ये शाश्वत् भव्य जिनालय, है शान्ति बरसती इनमें।
मानो आया सिद्धालय, मेरी बस्ती हो उनमें।
मैं हूँ शिवपुर का वासी, भव-भव की खतम कहानी॥

गर्भकल्याणक स्तुति

जय तीर्थङ्कर जय जगतनाथ

जय तीर्थङ्कर जय जगतनाथ, अवतरे आज हम हैं सनाथ।
धन भाग महारानी सुहाग, जो उर आये जिम सुरग त्याग॥ १॥
हम भक्ति करन उमगे अपार, आये आनन्द धर राज्यद्वार।
हम अङ्ग सफल अपना करेंय, जिन मातपिता सेवा करेंय॥ २॥
यह जगत तात यह जगत मात, यह मङ्गलकारी जग विख्यात।
इनकी महिमा नहिं कही जाय, इन आतम निश्चय मोक्षपाय॥ ३॥
जिनराज जगत उद्धारकार, त्रय जगत पूज्य अघ चूरकार।
तिनके प्रकटावन हार नाथ, हम आये तुम घर नाय माथ॥ ४॥

तुम देखे दरश सुख पाये नयना.....

तुम देखे दरश सुख पाये नयना॥ टेक॥
तुम जग ताता तुम जग माता, तुम वन्दन से भव भय ना॥ १॥
तुम गृह तीर्थङ्कर प्रभु आये, तुम देखे सोलह सुपना॥ २॥
तुम भव त्यागी मन वैरागी, सम्यक्दृष्टि शुचि वयना॥ ३॥
तुम सुत अनुपम ज्ञान विराजे, तीन ज्ञानधारी सुजना॥ ४॥
तुम सुत राज्य करै सुरनर पै, नीति निपुण दुःख उद्धरना॥ ५॥
तुम सुत साधु होय वन विहरे, तप साधत कर्मन हरना॥ ६॥
तुम सुत केवलज्ञान प्रकाशे, जग मिथ्यातम सब हरना॥ ७॥
तुम सुत धर्मतत्त्व सब भाषे, भवि अनेक भव से तरना॥ ८॥
कर्मबन्ध हर शिवपुर पहुँचे, फिर कबहूँ नहिं अवतरना॥ ९॥
हम सब आज जन्मफल मानो, गर्भोत्सवकर अघ दहना॥ १०॥

गर्भकल्याणक पूजन

(दोहा)

श्री जिन चौबिस मात शुभ, तीर्थङ्कर उपजाय।
कियो जगत कल्याण बहु, पूजों द्रव्य मँगाय॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

(चाल)

भरि गङ्गा जल अविकारी, मुनि चितसम शुचिता धारी।
जिन मात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता जलं निर्वपामीति स्वाहा।

घसि केशर चन्दन लाऊँ, भव ताप सकल प्रशमाऊँ।
जिन मात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ अक्षत दीर्घ अखण्डे, तृष्णा पर्वत निज खण्डे।
जिन मात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सुवरणमय पावन फूला, चित कामव्यथा निर्मूला।
जिन मात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजा पकवान बनाऊँ, जासे क्षुधरोग नशाऊँ।
जिन मात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई॥
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक रत्ननमय लाऊँ, सब दर्शनमोह हटाऊँ।
जिन मात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई॥
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन धूप जलाऊँ, कर्मन का वंश मिटाऊँ।
जिन मात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई॥
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल उत्तम-उत्तम लाऊँ, शिवफल उद्देश बनाऊँ।
जिन मात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई॥
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि आठों द्रव्य मिलाऊँ, गुण गाकर मन हरषाऊँ।
जिन मात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई॥
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्करा गर्भकल्याणकप्राप्ता अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२४ तीर्थङ्करों के गर्भकल्याणक तिथि के २४ अर्घ्य

(गीता)

सर्वार्थसिद्धि विमान से जिन, ऋषभ चय आये यहाँ,
मरुदेवी माता गरभ शोभै, होय उत्सव शुभ तहाँ।
आषाढ़ वदि दुतिया दिना, सब इन्द्र पूजैं आयके,
हम हूँ करैं पूजा सुमाता, गुण अपूरव ध्यायके॥
ॐ ह्रीं आषाढकृष्णद्वितीयायां मरुदेविगर्भावतरिताय वृषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

(दोहा)

जेठ अमावस सार दिन, गर्भ आय अजितेश।
विजया माता हम जजें, मेटैं सर्व कलेश॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाऽमावस्यायां विजयसेनागर्भावतरिताय अजितदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

(सङ्कर)

फागुन असित सित अष्टमी को गर्भ आये नाथ,
धन पुण्य मात सुसैन का संभव धरे सुख साथ।
उपकार जग का जो भया, सुरगुरु कथत थक जाय,
हम ल्याय के शुभ अर्घ्य पूजैं विघ्न सब टल जाय॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लाष्टम्यां सुषेणागर्भावतरिताय संभवदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

(गाथा)

गर्भस्थिति अभिनन्दा, वैसाख सित अष्टमी दिना सारा।
सिद्धार्था शुभ माता, पूजूँ चरण सुजान उपकारा॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाष्टम्यां सिद्धार्थागर्भावतरिताय अभिनन्दनदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

(सोरठा)

श्रावण सित पख आप, मात मङ्गला उर वसे।
श्री सुमतीश जिनाय, पूजूँ माता भाव सों॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लद्वितीयायां मङ्गलागर्भावतरिताय सुमतिदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

(शिखरिणी)

वदी षष्ठी जानो सुभग महिना माघ सुदिना,
सुसीमा माता के गर्भ तिष्ठै पद्म सु जिना।
जजों लैके अर्घ्यं मा देवी द्वन्द चरणा,
कटैं जासे हमरे सकल कर्म लेहु शरणा॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाषष्ट्यां सुसीमागर्भावतरिताय पद्मप्रभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

(धोदका)

भादव शुक्ल छठी तिथि जानी, गर्भ धरे पृथ्वी महारानी।
श्री सुपार्श्व जिननाथ पधारे, जजूँ मात दुःख टाल हमारे॥

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लषष्ट्यां पृथ्वीगर्भावतरिताय सुपार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥

(शिखरिणी)

सुभग चैतर महिना असित पख में पाँचम दिना,
सुलखना माता ने गर्भ धारे चन्द्र सु जिना।

जजौं लैके अर्घ्यं मात जिनके शुद्ध चरणा,
कटैं जासे हमरे सकल कर्म लेहु शरणा॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णापंचम्यां सुलक्षणागर्भावतरिताय चन्द्रप्रभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥

(सोरठा)

पुष्पदन्त भगवान, मात रमा के अवतरे।
फागुन नौमि महान, जजौं मात के चरण जुग॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णानवम्यां रमादेवीगर्भावतरिताय पुष्पदन्तदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

(चाल)

वदि चैत कृष्ण अठ जानी, सीतल प्रभु उपजे ज्ञानी।
नन्दा माता हरखानी, पूजूँ देवी उर सानी॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाऽष्टम्यां सुनन्दागर्भावतरिताय शीतलनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १०॥

वदी जेठ तनी छठि जानी, विष्णुश्री मात बखानी।
श्रेयांसनाथ उपजाये, पूजूँ माता गुण गाये॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाषष्ट्यां विष्णुश्रीगर्भावतरिताय श्रेयांसनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ११॥

आषाढ़ वदी छठि गाई, श्री वासुपूज्य जिनराई।
सुजया माता हरखानी, पूजूँ ता पद उर आनी॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णाषष्ट्यां जयावतिगर्भावतरिताय वासुपूज्यदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १२॥

जेठ वदी दसमी गणिये शुभ, मात सुश्यामा गर्भ पधारे,
नाथ विमल आकुलता हारी, तीन ज्ञानधर धर्म प्रचारे।
ता माता का धन्य भाग है, पूजत हैं हम अर्घ्य सुधारे,
मङ्गल पावें विघ्न नशावें, वीतरागता भाव सम्हारे॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णादशम्यां श्यामागर्भावतरिताय विमलनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १३॥

(अडिल्ल)

एकम कार्तिक कृष्ण गर्भ में आय के,
नाथ अनन्त सु सुरजामाता पाय के।
पूजूँ देवी सार धन्य तिस भाग है,
जासे विघ्न पलाय उदय सौभाग है॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाप्रतिपदायां सुरजामातृगर्भावतरिताय अनन्तनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १४॥

मात सुव्रता धर्म जिनं उर धारियो,
तेरसि सुदि वैशाख सु सुख संचारियो।
पूजूँ माता ध्याय धर्म उद्धारणी,
शिवपद जासे होय सुमङ्गल कारणी॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लत्रयोदश्यां सुव्रतागर्भावतरिताय धर्मनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १५॥

(शिखरिणी)

महा ऐरादेवी परम जननी शान्ति जिनकी,
सुदी सातें भादों करत पूजा इन्द्र तिनकी।
जजूँ मैं ले अर्घ्य मात जिन के द्वन्द चरणा,
भजे मम अघ सारे, नसत भव है जास शरणा॥

ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णासप्तम्यां ऐरादेविगर्भावतरिताय शान्तिनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १६॥

(चाल)

सावन दशमी अँधियारी, जिन गर्भ रहे सुखकारी।
प्रभु कुन्थु श्रीमतीमाता, पूजूँ जासों लहूँ साता॥

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णदशम्यां श्रीमतीगर्भावतरिताय कुन्थुनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १७॥

(मालती)

है गुण शील तनी सरिता, अरनाथ तना जननी सुख खानी।
मित्रा नाम प्रसिद्ध जगत में, सेव करत देवी हरषानी॥

मुक्ति होन को यश धारत है, सम्यक् रत्नत्रय पहचानी।
फागुन की सित तीज दिना अर, गर्भ धरे जजि हों महारानी॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लातृतीयायां मित्रसेनागर्भावतरिताय अरनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १८॥

(दोहा)

चैत्र शुक्ल पड़िवा वसे, मल्लिनाथ जिन देव।
प्रभावती के गर्भ में, जजूँ मात करुँ सेव॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लाप्रतिपदि प्रभावतीगर्भावतरिताय मल्लिनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १९॥

(अडिल्ल)

श्रावणबदि दुतिया दिन, मुनिसुव्रतनाथ जू,
श्यामा उर में बसे ज्ञान त्रय साथ जू।
ता माता के चरणकमल पूजें सदा,
मङ्गल होय महान विघ्न जावैं विदा॥

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णाद्वितीयायां श्यामागर्भावतरिताय मनिसुव्रतनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २०॥

(सोरठा)

नमिनाथ भगवान, विपुला माता उर बसे।
क्वाँर वदी दुज जान, ता देवी पूजूँ मुदा॥

ॐ ह्रीं आश्विनकृष्णाद्वितीयायां विपुलागर्भावतरिताय नमिनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २१॥

(मालती)

कार्तिक मास सुदी छठि के दिन, श्री जिन नेमप्रभु सुखकारी।
मात शिवा के गर्भ पधारे, मुदित भये जग के नरनारी॥
धन्य मात शिव-पथ अनुगामी, मोक्षनगर की है अधिकारी।
पूजूँ द्रव्य आठ शुभ लैके, मिटत कालिमा कर्म अपारी॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लाषष्ट्यां शिवागर्भावतरिताय नेमिनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २२॥

(चाल)

वैशाख वदी दुज जाना, श्री पार्श्वनाथ भगवाना।
वामादेवी उर आये, पूजत हम भाव लगाये॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णाद्वितीयायां वामादेवीगर्भावतरिताय पार्श्वनाथाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २३॥

(मालती)

मास अषाढ़ सुदी छठि के दिन, श्री जिन वीर प्रभू गुणधारी।
त्रिशला माता गर्भ पधारे, सकल लोक को मङ्गलकारी॥
मोक्षमहल की है अधिकारी, शान्त सुधा की भोगनहारी।
जजूँ मात के चरण युगल को, हरुँ विघ्न होऊँ अविकारी॥

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लाषष्ठ्यां त्रिशलादेविगर्भावतरिताय महावीरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २४॥

जयमाला

(सृग्विणी)

धन्य हैं धन्य हैं मात जिननाथ की, इन्द्र देवी करैं भक्ति भावाँ थकी।
पूजि हों द्रव्य ले विघ्न सारे टलें, गर्भकल्याण पूजन सकलअघ दलें॥ १॥

रूप की खान हैं, शील की खान हैं, धर्म की खान हैं, ज्ञान की खान हैं।
पुण्य की खान हैं, सुक्ख की खान हैं, तीर्थजननी महाशान्ति की खान हैं॥ २॥

भेदविज्ञान से आप-पर जानतीं, जैन सिद्धान्त का मर्म पहचानतीं।
आत्म-विज्ञान से मोह को हानतीं, सत्य चारित्र से मोक्ष-पथ मानतीं॥ ३॥

होत आहार निहार नहिं धारतीं, वीर्य अनुपम महा देह विस्तारतीं।
गर्भधारण किये दुःख सब टालतीं, रूप की ज्ञान की वृद्धि कर डालतीं॥ ४॥

मात चौबिस महा मोक्ष अधिकारिणी, पुत्र जननीं जिन्हें मोक्ष में धारिणी।
गर्भकल्याण में पूजते आप को, हो सफल यज्ञ यह छोड़ सन्ताप को॥ ५॥

(घत्ता-त्रिभङ्गी)

जय मङ्गलकारी मात हमारी बाधाहारी कर्म हरो,
तुम गुण शुचिधारी, हो अविकारी, सम-दम-यम निज माहिं धरो।
हम पूजें ध्यावें मङ्गल पावें शक्ति बढ़ावें वृष पाके,
जिन यज्ञ मनोहर शान्त सुधाकर, सफल करैं तब गुण गाके॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो गर्भकल्याणकप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्मकल्याणक-स्तुति

तुम जगत् ज्योति, तुम जगत ईश, तुम जगतगुरु, जग नमत शीस॥ टेक॥

तुम केवलज्ञान प्रकाशकार, तुम ही सूरज तम मोहहार।
तुम देखे भव्यकमल फुलाय, अघ भ्रमर तुरत तहँ से पलाय॥ १॥

जय महागुरु जय विश्वज्ञान, जय गुणसमुद्र करुणानिधान॥ २॥

जो चरणकमल माथे धराय, वह भव्य तुरत सद्ज्ञान पाय।
हे नाथ! मुक्तिलक्ष्मी अबार, तुम को देखत हैं प्रेम धार॥ ३॥

कृतकृत्य भये हम दर्श पाय, हम हर्ष नहीं चित में समाय।
हम जन्म सकल मानो अबार, तुमको परशे हे भव उबार॥ ४॥

जय वीतराग हत राग दोष, राषत दर्शन क्षायिक अदोष।
तुम पाप हरण हो नि:कषाय, पावन परमेष्ठी गुण निकाय॥ ५॥

तुम नय प्रमाण ज्ञाता अशेष, श्रुतज्ञान सकल जानो विशेष।
तुम अवधिज्ञान धारी विशाल, मतिज्ञान धरण सुखकर कृपाल॥ ६॥

तुम काम रहित हो काम जीत, तुम विद्या निधि हो कर्म जीत।
तुम शान्त स्वभावी स्वयं बुद्ध, तुम करुणानिधि धर्मी अक्रुद्ध॥ ७॥

तुम वदतांवर कृतकृत्य ईश, वाचस्पति गुणनिधि गिरा ईश।
तुम मोक्षमार्ग उपदेशकार, महिमा तुमरी को लहे पार॥ ८॥

(दोहा)

नाम लिये थुति के किये, पातक सर्व पलाय।
मङ्गल होवे लोक में, स्वात्मभूति प्रकटाय॥

जन्मकल्याणक पूजन

(गीता)

जिननाथ चौबिस चरण पूजा करत हम उमगाय,
जग जन्म लेके जग उधारो जजैं हम चित लाय॥
तिन जन्मकल्याणक सु उत्सव इन्द्र आय सुकीन,
हम हूँ सुमरता समय को पूजत हिये शुचि कीन॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करा जन्मकल्याणकप्राप्ता! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करा जन्मकल्याणकप्राप्ता! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः।

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करा जन्मकल्याणकप्राप्ता! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

(चाल)

जल निर्मल धार कटोरी, पूजूँ जिन निज कर जोड़ी।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन केशरमय लाऊँ, भव का आताप शमाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तरजाई॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यः संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत शुभ धोकर लाऊँ, अक्षय गुण को झलकाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तरजाई॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर पुहपनि चुनि लाऊँ, निज कामव्यथा हटवाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्य: कामबाण –विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान मधुर शुचि लाऊँ, हनि रोग क्षुधा सुख पाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्य: क्षुधारोग –विनाशनाय नैवैद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक करके उजियारा, निज मोह तिमिर निरवारा।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाइ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्य: मोहान्धकार–विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन धूप खिलाऊँ, निज अष्ट करम जलवाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल उत्तम–उत्तम लाऊँ, शिवफल जासे उपजाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्य: मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सब आठों द्रव्य मिलाऊँ, मैं आठों गुण झलकाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२४ तीर्थङ्करों के जन्मकल्याणक तिथि के अर्घ्य

(चाल)

वदि चैत नवमि शुभ गाई, मरुदेवी जने हरषाई।
श्री ऋषभनाथ युग आदी, पूजूँ भव मेटि अनादी॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णानवम्यां श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

दशमी शुभ माघ वदी की, विजया माता जिनजी की।
उपजे श्री अजित जिनेशा, पूजूँ मेटो सब क्लेशा॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णदशम्यां श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

कार्तिक सुदि पूरणमासी, माता सुसैन हुल्लासी।
श्री सम्भवनाथ प्रकाशे, पूजत आपा पर भाशे॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लपूर्णमास्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

शुभ द्वादस माघ सुदी की, अभिनन्दननाथ विवेकी।
उपजे सिद्धार्था माता, पूजूँ पाऊँ सुख साता॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

ग्यारस है चैत सुदी की, मङ्गला माता जिनजी की।
श्री सुमति जने सुखदाई, पूजूँ मैं अर्घ्य चढ़ाई॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

कार्तिक वदि तेरसि जानो, श्री पद्मप्रभु उपजानो।
है मात सुसीमा ताकी, पूजूँ ले रुचि समता की॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णात्रयोदश्यां श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

शुचि द्वादश जेठ सुदी की, पृथ्वी माता जिनजी की।
जिननाथ सुपारस जाये, पूजूँ हम मन हरषाये॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥

शुभ पूष वदी ग्यारस को, है जन्म चन्द्रप्रभु जिनको।
धन मात सुलखनादेवी, पूजूँ जिनको मुनिसेवी॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥

अगहन सुदि एकम जाना, जिन मात रमा सुख खाना।
श्री पुष्पदन्त उपजाये, पूजत हूँ ध्यान लगाये॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाप्रतिपदायां श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

द्वादश वदि माघ सुहानी, नंदा माता सुखदानी।
श्री शीतल जिन उपजाये, हम पूजत विघ्न नशाये॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १०॥

फागुन वदि ग्यारस नीकी, जननी विमला जिनजी की।
श्रेयांसनाथ उपजाये, हम पूजत ही सुख पाये॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णादशम्यां श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ११॥

वदि फाल्गुन चौदसि जाना, विजया माता सुख खाना।
श्री वासुपूज्य भगवाना, पूजूँ पाऊँ जिन ज्ञाना॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १२॥

शुभ द्वादश माघ वदी की, श्याम माता जिनजी की।
श्री विमलनाथ उपजाये, पूजत हम ध्यान लगाये॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाद्वादश्यां श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १३॥

द्वादशि वदि जेठ प्रमाणी, सुरजामाता सुखदानी।
जिननाथ अनन्त सुजाये, हम पूजत नाहिं अघाये॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाद्वादश्यां श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १४॥

तेरसि सुदि माघ महीना, श्री धर्मनाथ अघ छीना।
माता सुव्रता उपजाये, हम पूजत ज्ञान बढ़ाये॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लात्रयोदश्यां श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १५॥

वदि चौदस जेठ सुहानि, ऐरादेवी गुण खानी।
श्री शान्ति जने सुख पाये, हम पूजत प्रेम बढ़ाये॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १६॥

पड़िवा वैशाख सुदी की, लक्ष्मीमति माता नीकी।
श्री कुन्थुनाथ उपजाये, पूजत हम अर्घ्य चढ़ाये॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदि श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १७॥

अगहन सुदि चौदस मानी, मित्रा देवी हरषानी।
अर तीर्थङ्कर उपजाये, पूजे हम मन-वच-काये॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लचर्तुदश्यां श्रीअरनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १८॥

अगहन सुदि ग्यारस आये, श्री मल्लिनाथ उपजाये।
है मात प्रजापति प्यारी, पुजत अघ विनशै भारी॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाएकादश्यां श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १९॥

दशमी वैशाख वदी की, श्यामा माता जिनजी की।
मुनिसुव्रत जिन उपजाये, पूजत हम ध्यान लगाये॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णादशम्यां श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २०॥

दशमी आषाढ़ वदी की, विपुला माता जिनजी की।
नमि तीर्थङ्कर उपजाये, पूजत हम ध्यान लगाये॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णादशम्यां श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २१॥

श्रावण शुक्ला छठि जानो, उपजे जिन नेमि प्रमानो।
जननी सु शिवाजिनजी की, हम पूजत हैं थल शिव की॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ट्यां श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २२॥

वदि पूष चतुर्दशि जानी, वामादेवी हरषानी।
जिन पार्श्व जने गुणखानी, पूजें हम नाग निशानी॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २३॥

शुभ चैत्र त्रयोदश शुक्ला, माता गुणखानी त्रिशला।
श्री वर्द्धमान जिन जाये, हम पूजत विघ्न नशाये॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २४॥

जयमाला

(भुजङ्ग प्रयात)

नमो जै नमो जै नमो जै जिनेशा,
तुम्हीं ज्ञान सूरज, तुम्हीं शिव प्रवेशा।
तुम्हें दर्श करके महामोह भाजे,
तुम्हें पर्श करके सकल ताप भाजे॥ १॥

तुम्हें ध्यान में धारते जो गिराई,
परम आत्म अनुभव छटा सार पाई।
तुम्हें पूजते नित्य इन्द्रादि देवा,
लहैं पुण्य अद्‌भुत परम ज्ञान मेवा॥ २॥

तुम्हारो जनम तीन भू दुःख निवारी,
महामोह मिथ्यात हिय से निकारी।
तुम्हीं तीन बोध धरे जन्म ही से,
तुम्हें दर्शनं क्षायिकं जन्म ही से॥ ३॥

तुम्हें आत्मदर्शन रहे जन्म ही से,
तुम्हें तत्त्व बोधं रहे जन्म ही से।
तुम्हारा महापुण्य आश्चर्यकारी,
सु महिमा तुम्हारी सदा पापहारी॥ ४॥

करा शुभ न्हवन क्षीरसागर सु जल से,
मिटी कालिमा पाप की अङ्ग पर से।
हुआ जन्म सफलं करी देव सेवा,
लहूँ पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा॥ ५॥

(दोहा)

श्री जिन चौबिस जन्म की, महिमा उर में धार।
पूज करत पातक टलें, बढ़े ज्ञान अधिकार॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तपकल्याणक स्तुति

(दोहा)

धिक्-धिक् या संसार में, नित्य नहीं पर्याय।
देखत-देखत विलय हो, ध्रुवता कौन लहाय॥ १॥

मरणकाल आवे निकट, कोय न राखनहार।
कोटिक यत्न विचारिये, निष्फल हों हरबार॥ २॥

क्षण-क्षण उम्र विलात है, ज्यों-ज्यों काल विताय।
मरण करत मानें सुखी, हम युवान वय आय॥ ३॥

जरा जु वाधन भयकारी, आवत है ततकाल।
पकड़ तिसे निर्बल करे, डसे काल विकराल॥ ४॥

या संसार अपार में, चारों गति दुःखदाय।
शारीरिक मनसा बहुत, क्लेश होय भयदाय॥ ५॥

देव आदि भी ना सुखी, तृष्णावश दुःख पाय।
देख जलत पर सम्पदा, इष्ट वियोग धराय॥ ६॥

जो जाने निज आपको, सरधै निज सुख सार।
निज में आपी मगन हो, सो सुखिया संसार॥ ७॥

मोह अन्ध जे जीवड़ा, धन कुटुम्ब में लीन।
आकुलता नितप्रति लहें, दशा बनाई दीन॥ ८॥

द्रव्य भिन्न हर जीव का, जब पलटे पर्याय।
उपजै मरै जु एकला, कोई नहीं सहाय॥ ९॥

तीव्र क्लेश अरु शोक का, आपी भुगतै जीव।
साथी सगा न देखिये, भिन्न-भिन्न है जीव॥ १०॥

जब यह तन भी मम नहीं, साथ न जावै कोय।
परिजन पुरजन धन कणा, किह विधि साथी होय॥ ११॥

यह शरीर सुन्दर दिखे, भीतर मल समुदाय।
खड़न गलन आदत धरै, तुरत मृतक हो जाय॥ १२॥

तीन जगत में अशुचि है, मानुष तन अधिकाय।
वस्त्रमाल जल शुचि दरब, परश अशुचि हो जाय॥ १३॥

मिथ्या श्रद्धा धार के, हिंसादिक बहु पाप।
करें कषायन वश रहे, हो प्रमाद सन्ताप॥ १४॥

मन-वच-काय न थिर रहे, योग भाव हिल जाय।
कर्मवर्गणा पुञ्ज तब, आवत तहँ अधिकाय॥ १५॥

बंध होय पिंजरा बने, कार्मण तन दुखदाय।
जब तक यह टूटे नहीं, मुक्ति न कोय लहाय॥ १६॥

संवर भाव विचारिये, सम्यग्दर्शन सार।
संयम अर वैराग्य से, रुकै कर्म की धार॥ १७॥

आतम ध्यान महा अगनि, जब निज में प्रजलाय।
कोटिक भव बँधे करम, तुत भस्म हो जाय॥ १८॥

तप समान इस जीव का, मित्र न को संसार।
निश्चय तप निज आतमा, तारै भवदधि खार॥ १९॥

पुरुषकार अकृत्रिमा, लोक अनादि अनन्त।
ऊरध मध्य अधो विषें, सिद्ध लोक सुखवन्त॥ २०॥

दुर्लभ है इस लोक में, नर-तन दीरघ आयु।
इन्द्रिय बल की पूर्णता, डसै न रोग कु वायु॥ २१॥

एक इन्द्रिय पर्याय तें, चढ़न कठिन संसार।
बिरला नरतन पावता, जो सब तन में सार॥ २२॥

या तन पाय न तप किया, लिया न निजरस स्वाद।
मूरख अवसर चूकता, छाड़ै ना परमाद॥ २३॥

धर्म मित्र या जीव का, जो राखे शिव माहिं।
दुर्गति से रक्षा करै, सुख देवै अधिकाहिं॥ २४॥

हा हा धिक् धिक् है मुझे, इतना काल गमाय।
मोह राज्य पुत्रादि में, कर निजसुख विसराय॥ २५॥

अब संयम धरना सही, जिम धारा बहु लोक।
कर्म काट शिवथल बसे, पाया निजसुख थोक॥ २६॥

कुछ विलम्ब करना नहीं, समय न पलटत जाय।
क्षण क्षण आयु बिलात है, राखन को न उपाय॥ २७॥

धर्म मित्र की शरण में, रहना ही सुखकार।
जो तारे भवसिन्धु तें, पहुँचावे शिवद्वार॥ २८॥

तपकल्याणक

चेतन रस के रसिक प्रभु को, विषयों का रस क्यों भाता?
उनका मन तो मुक्ति वधू के, शाश्वत् सुख को ललचाता॥

अतः कामिनी का आकर्षण, उन्हें परास्त न कर पाया।
निर्ग्रन्थों के पथ पर चलने का, विचार ही मन भाया॥

धन्य-धन्य है ध्येय तुम्हारा, लौकान्तिक सुर आ कहते।
अन्तर्बाह्य परिग्रह तजकर, प्रभु वन में विचरण करते॥

क्षण-क्षण में अन्तर्मुख होकर, करें अतीन्द्रिय रस का पान।
पर्यायों से पार त्रिकाली ध्रुव, परिणति का ध्येय महान॥

तपकल्याणक पूजा

(गीता)

श्री ऋषभदेव सु आदि जिन श्रीवर्द्धमान जु अन्त हैं।
वन्दहुँ चरण वारिज तिन्हों के जयत तिनको सन्त हैं॥
कर तपस्या साधु व्रत ले मुक्ति के स्वामी भये।
तिन तपकल्याणक यजन को द्रव्य आठों हैं लये॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिवर्द्धमानजिना: तपकल्याणकप्राप्ता: !अवतरत अवतरत संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिवर्द्धमानजिना: तपकल्याणकप्राप्ता: ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ: ठ:।
ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिवर्द्धमानजिना: तपकल्याणकप्राप्ता: ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

(चाल)

शुचि गङ्गाजल भर झारी, रुज जन्म मरण क्षयकारी।
तपसी जिन चौबिस गाये, हम पूजत विघ्न नशाये॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्य: तपकल्याणकप्राप्तेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चन्दन घसि लाऊँ, भव का आताप शमाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाये, हम पूजत विघ्न नशाये॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्य: तपकल्याणकप्राप्तेभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत ले शशि द्युतिकारी, अक्षयगुण के करतारी।
तपसी जिन चौबिस गाये, हम पूजत विघ्न नशाये॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्य: तपकल्याणकप्राप्तेभ्योऽक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बहु फूल सुवर्ण चुनाऊँ, निज काम-व्यथा हटवाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाये, हम पूजत विघ्न नशाये॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्य: तपकल्याणकप्राप्तेभ्य: पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चरु ताजे स्वच्छ बनाऊँ, निज रोग क्षुधा मिटवाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाये, हम पूजत विघ्न नशाये॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्य: तपकल्याणकप्राप्तेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक ले तम हरतारा, निज ज्ञानप्रभा विस्तारा।
तपसी जिन चौबिस गाये, हम पूजत विघ्न नशाये॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्य: तपकल्याणकप्राप्तेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन धूप खिवाऊँ, निज आठों कर्म जलाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाये, हम पूजत विघ्न नशाये॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्य: तपकल्याणकप्राप्तेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल सुन्दर ताजे लाऊँ, शिवफल ले चाह मिटाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाये, हम पूजत विघ्न नशाये॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्य: तपकल्याणकप्राप्तेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ आठों द्रव्य मिलाऊँ, करि अर्घ्य परम सुख पाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाये, हम पूजत विघ्न नशाये॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्य: तपकल्याणकप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२४ तीर्थङ्करों के तपकल्याणक तिथि के अर्घ्य

नौमी वदि चैत्र प्रमाणी, वृषभेश तपस्या ठानी।
निज में निजरूप पिछाना, हम पूजत पाप नशाना॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णानवम्यां श्रीऋषभजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

दशमी शुभ माघ वदी को, अजितेश लियो तप नीको।
जग का सब मोह हटाया, हम पूजत पाप भगाया॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णादशम्यां श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

मगसिर सुदि पूरणमासी, सम्भव जिन होय उदासी।
कचलोंच महातप धारो, हम पूजत भय निरवारो॥
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लापूर्णिमास्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

द्वादश शुभ माघ सुदी की, अभिनन्दन वन चलने की।
चित ठान परम तप लीना, हम पूजत हैं गुण चीह्ना॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लाद्वादश्यां श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

नौमी वैशाख सुदी में, तप धारा जाकर वन में।
श्री सुमतिनाथ मुनिराई, पूजूँ मैं ध्यान लगाई॥
ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लानवम्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

कार्तिक वदि तेरसि गायी, पद्मप्रभ समता भायी।
वन जाय घोर तप कीना, पूजें हम समसुख भीना॥
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णात्रयोदश्यां श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

सुदि द्वादश जेठ सुहाई, बारा भावन प्रभु भाई।
तप लीना केश उखाड़े, पूजूँ सुपार्श्व यति ठाड़े॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥

एकादश पौष वदी को, चन्द्रप्रभ धारा तप को।
वन में जिनध्यान लगाया, हम पूजत ही सुख पाया॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥

अगहन सुदि एकम जाना, श्री पुष्पदन्त भगवाना।
तप धार ध्यान निज कीना, पूजूँ आतमगुण चीह्ना॥
ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाप्रतिपदायां श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

द्वादश वदि माघ महीना, शीतल प्रभु समता भीना।
तप राखो योग सम्हारो, पूजें हम कर्म निवारो॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाद्वादश्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १०॥

वदि फाल्गुन ग्यारस गाई, श्रेयांसनाथ सुखदाई।
हो तपसी ध्यान लगाया, हम पूजत हैं जिनराया॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ११॥

वदि फाल्गुन चौदसि स्वामी, श्री वासुपूज्य शिवगामी।
तपसी हो समता साधी, हम पूजत धार समाधी॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १२॥

वदि माघ चौथ हितकारी, श्री विमल सुदीक्षा धारी।
निज परिणति में लय पाई, हम पूजत ध्यान लगाई॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाचतुर्थ्यां श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १३॥

द्वादश वदि जेठ सुहानी, वन आये जिन त्रय ज्ञानी।
धर सामायिक तप साधा, पूजूँ अनन्त हर बाधा॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाद्वादश्यां श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १४॥

तेरस सुदि माघ महीना, श्री धर्मनाथ तप लीना।
वन में प्रभु ध्यान लगाया, हम पूजत मुनिपद ध्याया॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लात्रयोदश्यां श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १५॥

चौदस शुभ जेठ वदी में, श्री शान्ति पधारे वन में।
तहँ परिग्रह तज तप लीना, पूजूँ आतमरस भीना॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १६॥

करि दूर परिग्रह सारी, वैसाख सुदी पड़िवारी।
श्री कुन्थु स्वात्मरस जाना, पूजन से हो कल्याणा॥
ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदायां श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १७॥

अगहन सुदी दशमी गाई, अरनाथ छोड़ गृह जाई।
तप कीना होय दिगम्बर, पूजें हम शुभ भावों कर॥
ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाचतुर्दश्यां श्रीअरनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १८॥

अगहन सुदि ग्यारस कीना, सिर केशलोंच हित चीह्ना।
श्रीमल्लि यति व्रतधारी, पूजें नित साम्य प्रचारी॥
ॐ ह्रीं अगहनशुक्लैकादश्यां श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १९॥

वैसाख वदी दशमी को, मुनिसुव्रत धारा व्रत को।
समतारस में लौ लाये, हम पूजत ही सुख पाये॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णादशम्यां श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २०॥

दशमी आषाढ़ वदी की, नमिनाथ हुए एकाकी।
वन में निज आतम ध्याये, हम पूजत ही सुख पाये॥
ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णादशम्यां श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २१॥

छठि श्रावण शुक्ला आई, श्री नेमिनाथ वन जाई।
करुणा धर पशू छुड़ाए, धारा तप पूजूँ ध्याये॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ट्यां श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २२॥

लखि पौष इकादशि श्यामा, श्री पार्श्वनाथ गुणधामा।
तप ले वन आसन आना, हम पूजत शिवपद पाना॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २३॥

अगहन वदी दशमी गाई, बारह भावन शुभ भाई।
श्री वर्द्धमान तप धारा, हम पूजत हों भव पारा॥

ॐ ह्रीं अगहनकृष्णादशम्यां श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २४॥

जयमाला

(भुजङ्गप्रयात)

नमस्ते नमस्ते नमस्ते मुनिन्दा। निवारें भली भाँति से कर्म फन्दा॥
सँवारे सुद्वादश तपं वन मँझारी। सदा हम नमत हैं तिन्हें मन सम्हारी॥ १॥

त्रयोदश प्रकारं सु चारित्र धारा। अहिंसा महा सत्य अस्तेय प्यारा॥
परम ब्रह्मचर्य परिग्रह तजाया। सु धारा महा संयमं मन लगाया॥ २॥

दया धार भू को निरखकर चलत हैं। सुभाषा महाशुद्ध मीठी वदत हैं॥
करैं शुद्ध भोजन सभी दोष टालें। दया को धरे वस्तु ले मल निकालें॥ ३॥

वचन काय मन गुप्ति को नित्य धारें। धरम ध्यान से आत्म अपना विचारे।
धरें साम्य भावं रहें लीन निज में। सुचारित्र निश्चय धरें शुद्ध मन में॥ ४॥

ऋषभ आदि श्री वीर चौबीस जिनेशा। बड़े वीर क्षत्री गुणी ज्ञान ईशा।
खड्ग ध्यान आतम कुबल मोहनाशा। जजें हम यतन से स्वआतम प्रकाशा॥ ५॥

(दोहा)

धन्य साधुसम गुण धरें, सहें परीसह धीर।
पूजत मङ्गल हों महा, टलें जगतजन पीर॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः तपकल्याणकप्राप्तेभ्यो महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आहारदान के समय पर मुनिराज ऋषभदेव की पूजन

(पद्धरी)

जय जय तीर्थङ्कर गुरु महान्, हम देख हुए कृतकृत्य प्राण।
महिमा तुमरी वरणी न जाय, तुम शिव मारग साधत स्वभाव॥ १॥

जय धन्य-धन्य महावीर आज, तुम दर्शन से सब पाप भाज।
हम हुए सु पावन गात्र आज, जय धन्य-धन्य तप सार साज॥ २॥

तुम छोड़ परिग्रह भार नाथ, लीनो चारित्र तप ज्ञान साथ।
निज आतम ध्यान प्रकाशकार, तुम कर्म जलावन वृत्ति धार॥ ३॥

जय सर्व जीव रक्षक कृपाल, जय धारत रत्नत्रय विशाल।
जय मौनी आतम मननकार, जग जीव उद्धारण मार्ग धार॥ ४॥

हम गृह पवित्र चरण तुम पाय, हम मन पवित्र तुम ध्यान ध्याय।
हम भये कृतारथ आप पाय, तुम चरण सेवने चित बढ़ाये॥ ५॥

ॐ ह्रीं वीरऋषभदेवतीर्थङ्कराय पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

(बसन्ततिलका)

सुन्दर पवित्र गंगाजल लेय झारी, डारूँ त्रिधार तुम चरणन अग्र भारी।
श्री तीर्थनाथ ऋषभेश मुनीन्द्र चरणा, पूजूँ सुमङ्गल करण सब पाप हरणा॥
ॐ ह्रीं ऋषभदेवतीर्थङ्करमुनीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चन्दनादि शुभ केशर मिश्र लाये, भवताप उपशमकरण निजभाव ध्याये।
श्री तीर्थनाथ ऋषभेश मुनीन्द्र चरणा, पूजूँ सुमङ्गल करण सब पाप हरणा॥
ॐ ह्रीं ऋषभदेवतीर्थङ्करमुनीन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ श्वेत निर्मल सुअक्षत धार थाली, अक्षय गुणा प्रकट कारण शक्तिशाली।
श्री तीर्थनाथ ऋषभेश मुनीन्द्र चरणा, पूजूँ सुमङ्गल करण सब पाप हरणा॥
ॐ ह्रीं ऋषभदेवतीर्थङ्करमुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तयेऽक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पा गुलाब इत्यादि सु पुण्य धारे, है काम शत्रु बलवान तिसे विदारे।
श्री तीर्थनाथ ऋषभेश मुनीन्द्र चरणा, पूजूँ सुमङ्गल करण सब पाप हरणा॥
ॐ ह्रीं ऋषभदेवतीर्थङ्करमुनीन्द्राय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

फेणी सुहाल बरफी पकवान लाये, क्षुधरोग नाशने कारण काल पाये।
श्री तीर्थनाथ ऋषभेश मुनीन्द्र चरणा, पूजूँ सुमङ्गल करणा सब पाप हरणा॥
ॐ ह्रीं ऋषभदेवतीर्थङ्करमुनीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभदीप रत्नमय लाय तमोपहारी, तम मोह नाश मम होय अपार भारी।
श्री तीर्थनाथ ऋषभेश मुनीन्द्र चरणा, पूजूँ सुमङ्गल करण सब पाप हरणा॥
ॐ ह्रीं ऋषभदेवतीर्थङ्करमुनीन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर सुगन्धित सु पावन धूप खेऊँ, अरु कर्म काट को थाल निजात्म बेऊँ।
श्री तीर्थनाथ ऋषभेश मुनीन्द्र चरणा, पूजूँ सुमङ्गल करण सब पाप हरणा॥
ॐ ह्रीं ऋषभदेवतीर्थङ्करमुनीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

द्राक्षा बदाम फल सार भराय थाली, शिव लाभ होय सुख से समता संभाली।
श्री तीर्थनाथ ऋषभेश मुनीन्द्र चरणा, पूजूँ सुमङ्गल करण सब पाप हरणा॥
ॐ ह्रीं ऋषभदेवतीर्थङ्करमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ अष्टद्रव्यमय उत्तम अर्घ्यं लाया, संसार खार जल तारण हेतु आया।
श्री तीर्थनाथ ऋषभेश मुनीन्द्र चरणा, पूजूँ सुमङ्गल करण सब पाप हरणा॥
ॐ ह्रीं ऋषभदेवतीर्थङ्करमुनीन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(श्रग्विणी)

जय मुदारूप तेरे सदा दोष ना, ज्ञान श्रद्धान पूरित धरैं शोक ना।
राज को त्याग वैराग्य धारी भए, मुक्ति का राज लेने परम मुनि भये॥ १॥

आत्म को जान के पाप को भान के, तत्त्व को पाय के ध्यान उर आन के।
क्रोध को हान के मान को हान के, लोभ को जीत के मोह को भान के॥ २॥

धर्ममय होय के साधते मोक्ष को, बाधते मोह को जीतते द्वेष को।
शान्तता धारते साम्यता पालते, आप पूजन किये सर्व अघ बालते॥ ३॥

धन्य हैं आज हम दान सम्यक् करें, पात्र उत्तम महा पाप के दुःख दरें।
पुण्य सम्पत भरें काज हमरे सरें, आप सम होय के जन्मसागर तरें॥ ४॥
ॐ ह्रीं ऋषभदेवतीर्थङ्करमुनीन्द्राय महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री केवली भगवान की स्तुति

(पद्धरि)

जय केवलज्ञान प्रकाश धरं। ज्ञानावरणीय विनाश करं॥ टेक॥
जय केवलदर्शन नायक हो। दर्शन आवरणी घातक हो॥ १॥
जय वीर्य अनन्त प्रकाशक हो। जय अन्तराय अघ नाशक हो।
तुम मोह बली क्षयकारक हो। क्षायिक समकित के धारक हो॥ २॥
क्षायिक चारित्र विशाल धरं। आनन्द अनन्त प्रकाश धरं।
जग माँहिं अपूरव सूरज हो। विकसन भवि जीवन नीरज हो॥ ३॥
मिथ्यात्व महातम टालन हो। शिवमग उत्तम दरशावन हो।
तुम तारण तरण तरण्ड वरं। सुख कारण रत्नकरण्ड वरं॥ ४॥

ज्ञानकल्याणक स्तुति

(मुक्तादान)

नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु मुनीश। परम तप के करतार ऋषीश।
न मोह न मान न क्रोध न लोभ। न हास्य न खेद न द्रोह न क्षोभ॥ १॥
ममत्व न राग पदारथ सर्व। चिदातम वेदत छाँड़त गर्व।
सु भेद-विज्ञान जगो चित बीच। सु आतम अनुभव लावत खींच॥ २॥
स्वतत्त्व रमन्त करत निज काज। कषाय रिपु दलने को आज॥ ३॥
लियो सत ध्यानमयी अति सार। नमूँ तुम को जिन कर्म निवार॥ ४॥

केवलज्ञानकल्याणक पूजन

(गीता)

चौबीस जिनवर तीर्थकारी, ज्ञानकल्याणक धरं।
महिमा अपार प्रकाश जग में, मोह मिथ्यातम हरं॥
कीने बहुत भवि जीव सुखिया, दुःखसागर उद्धरं।
तिनकी चरण पूजा करें, तिन सम बने यह रुचिधरं॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्राः ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्राः ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः।
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्राः ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

(चामर)

नीर लाय शीतलं महान मिष्टता धरे, गन्ध शुद्ध मेलि के पवित्र झारिका भरे।
नाथ चौबिसों महान् वर्तमानकाल के, बोध उत्सवं करूँ प्रमाद सर्व टाल के॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो ज्ञानकल्याणकप्राप्ता जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्वेत चन्दनं सुगन्धयुक्तसार लाय के, पात्र में धराय शान्ति कारने चढ़ाय के।
नाथ चौबिसों महान वर्तमानकाल के, बोध उत्सवं करूँ प्रमाद सर्व टाल के॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो ज्ञानकल्याणकप्राप्ता संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

तंदुलं भले सुश्वेत वर्ण दीर्घ लाइये, पाय गुण सु अक्षतं अतृप्तता नशाइये।
नाथ चौबिसों महान वर्तमानकाल के, बोध उत्सवं करूँ प्रमाद सर्व टाल के॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो ज्ञानकल्याणकप्राप्ता अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण वर्ण पुष्पसार लाइये चुनाय के, काम कष्ट नाश हेतु पूजिये स्वभाव के।
नाथ चौबिसों महान् वर्तमानकाल के, बोध उत्सवं करूँ प्रमाद सर्व टाल के॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो ज्ञानकल्याणकप्राप्ता कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीर मोदकादि शुद्ध तुर्त ही बनाइये, भूख रोग नाश हेतु चर्ण में चढ़ाइये।
नाथ चौबिसों महान वर्तमानकाल के, बोध उत्सवं करूँ प्रमाद सर्व टाल के॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो ज्ञानकल्याणकप्राप्ता क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप धार रत्नमय प्रकाशता महान है, मोह अंधकार हार होत स्वच्छज्ञान है।
नाथ चौबिसों महान वर्तमानकाल के, बोध उत्सवं करूँ प्रमाद सर्व टाल के॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो ज्ञानकल्याणकप्राप्ता मोहान्धकार –विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप गन्ध सार लाय धूपदान खेइये, कर्म आठ को जलाय आप आप बेइये।
नाथ चौबिसों महान् वर्तमानकाल के, बोध उत्सवं करूँ प्रमाद सर्व टाल के॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो ज्ञानकल्याणकप्राप्ता अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लौंग औ बदाम आम्र आदि पक्वफल लिये, सुमुक्तिधाम पाय के स्वआत्म अमृत पिये।
नाथ चौबिसों महान् वर्तमानकाल के, बोध उत्सवं करूँ प्रमाद सर्व टाल के॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो ज्ञानकल्याणकप्राप्ता मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

तोय गन्ध अक्षतं सु पुष्प चारु चरू धरे, दीप धूप फल मिलाय अर्घ्य दे सुख करे।
नाथ चौबिसों महान् वर्तमानकाल के, बोध उत्सवं करूँ प्रमाद सर्व टाल के॥
ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२४ तीर्थङ्करों की ज्ञानकल्याणक तिथि के अर्घ्य

(चाली)

एकादशि फागुन वदि की, मरुदेवी माता जिन की।
हत घाती केवल पायो, पूजत हम चित उमगायो॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

एकादशि पूष सुदी को, अतिजेश हतो घाती को।
निर्मल निज ज्ञान उपाये, हम पूजत सम सुख पाये॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लैकादश्यां श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

कार्तिक वदी चौथ सुहाई, संभव केवल निधि पाई।
भविजीवन बोध दियो है, मिथ्यामत नाश कियो है॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाचतुर्दश्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

चौदशि शुभपौष सुदी को, अभिनन्दन हन घाती को।
केवल या धर्म प्रचारा, पूजूँ चरणा हितकारा॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लाचतुर्दश्यां श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

एकादशि चैत सुदी को, जिन सुमति ज्ञान लब्धी को।
पाकर भविजीव उधारे, हम पूजत भव हरतारे॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

मधु शुक्ला पूरणमासी, पद्मप्रभ तत्त्व अभ्यासी।
केवल ले तत्त्व प्रकाशा, हम पूजत सम सुख भाशा॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लापूर्णमास्यां श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

छठि फाल्गुन की अँधियारी, चउ घातीकर्म निवारी।
निर्मल निज ज्ञान उपाया, धन-धन सुपार्श्व जिनराया॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाषष्ट्यां श्रीसुपार्श्वजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥

फाल्गुन वदि नौमि सुहाई, चन्द्रप्रभ आतम ध्याई।
हन घाती केवल पाया, हम पूजत सुख उपजाया॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णानवम्यां श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥

कार्तिक सुदि दुतिया जानो, श्री पुष्पदन्त भगवानो।
रज हर केवल दरशानो, हम पूजत पाप बिलानो॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लाद्वितीयायां श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

चौदसि वदि पौष सुहानी, शीतलप्रभु केवलज्ञानी।
भव का सन्तापा हटाया, समता सागर प्रकटाया॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीशीतलानाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १०॥

वदि माघ अमावसि जानो, श्रेयांस ज्ञान उपजानो।
सब जग में श्रेय कराया, हम पूजत मङ्गल पाया॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाऽमावस्यायां श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ११॥

शुभ दुतिया माघ सुदी को, पाया केवल लब्धी को।
श्री वासुपूज्य भवितारी, हम पूजत अष्ट प्रकारी॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लाद्वितीयायां श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १२॥

छठि माघ वदी हत घाती, केवल लब्धी सुख लाती।
पाई श्री विमल जिनेशा, हम पूजत कटत कलेशा॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाषष्ट्यां श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १३॥

वदि चैत अमावसि गाई, निसु केवलज्ञान उपाई।
पूजूँ अनन्त जिन चरणा, जो हैं अशरण के शरणा॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाऽमावस्यायां श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १४॥

मासान्त पौष दिन भारी, श्री धर्मनाथ हितकारी।
पायो केवल सद्बोधं, हम पूजें छाँड़ कुबोधं॥

ॐ ह्रीं पौषपूर्णिमायायां श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १५॥

सुदि पूस इकादसि जानी, श्री शांतिनाथ सुखदानी।
लहि केवल धर्म प्रचारा, पूजूँ मैं अघ हरतारा॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लैकादश्यां श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १६॥

वदि चैत्र तृतीया स्वामी, श्रीकुन्थुनाथ गुण धामी।
निर्मल केवल उपजायो, हम पूजत ज्ञान बढ़ायो॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णातृतीयायां श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १७॥

कार्तिक सुदी बारस जानो, लहि केवलज्ञान प्रमाणो।
पर तत्त्व निजत्व प्रकाशा, अरनाथ जजों हत आशा॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लाद्वादश्यां श्रीअरनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १८॥

वदि पूष द्वितीया जाना, श्री मल्लिनाथ भगवाना।
हत घाती केवल पाये, हम पूजत ध्यान लगाये॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णाद्वितीयायां श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १९॥

वैशाख वदी नौमी को, मुनिसुव्रत जिन केवल को।
लहि वीर्य अनन्त सम्हारा, पूजूँ मैं सुख करतारा॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णानवम्यां श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २०॥

अगहन सुदि ग्यारस आये, नमिनाथ ध्यान लौ लाये।
पाया केवल सुखदाई, हम पूजत चित हरषाई॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लैकादश्यां श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २१॥

पडिवा सुभकार सुदी को, श्री नेमिनाथ जिनजी को।
इच्छो केवल सत ज्ञानं, हम पूजत ही दुःख हानं॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदायां श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २२॥

तिथि चैत्र चतुर्थी श्यामा, श्री पार्श्व प्रभू गुणधामा।
केवललहि तत्त्वप्रकाशा, हम पूजत कर शिव आशा॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाचतुर्थ्यां श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २३॥

दशमी वैशाख सुदी को, श्री वर्धमान जिनजी को।
उपजो केवल सुखदाई, हम पूजत विघ्न नशाई॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लादशम्यां श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २४॥

जयमाला

(सृग्विणी)

जय ऋषभनाथजी ज्ञान के सागरा, घातिया घातकर आप केवल वरा।
कर्मबन्धनमयी साँकला तोड़कर, आपका स्वाद ले स्वाद पर छोड़कर॥ १॥

धन्य तू धन्य तू धन्य तू नाथजी, सर्व साधू नमें तोहि को नाथजी।
दर्श तेरा करैं ताप मिट जात है, भर्म भाजें सभी पाप हट जात है॥ २॥

धन्य पुरुषार्थ तेरा महा अद्भुतं, मोह सा शत्रु मारा त्रिघाती हतं।
जीत त्रैलोक्य को सर्वदर्शी भये, कर्मसेना हती दुर्ग चेतन लये॥ ३॥

आप सत् तीर्थ त्रयरत्न से निर्मिता, भव्य लेवें शरण होंय भव-भय रिता।
वे कुशल से तिरें संसृती सागरा, जाय ऊरध लहें सिद्ध सुन्दर धरा॥ ४॥

यह समवशर्ण भवि जीव सुख पात हैं, वाणि तेरी सुने मन यही भात हैं।
नाथ दीजे हमें धर्म अमृत महा, इस बिना सुख नहीं दुःख भव में सहा॥ ५॥

ना क्षुधा ना तृषा राग ना द्वेष है, खेद चिन्ता नहीं आर्ति ना क्लेश है।
लोभ मद क्रोध माया नहीं लेश है, वन्दता हूँ तुम्हें तू हि परमेश है॥ ६॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो ज्ञानकल्याणकप्राप्तेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २४॥

दिव्यध्वनि प्रसारण हेतु विशेष स्तुति

(पद्धरि)

जय परम ज्योति ब्रह्मा मुनीश, जय आदिदेव वृषनाथ ईश।
परमेष्ठी परमातम जिनेश, अजरामर अक्षय गुण विशेष॥ १॥

शङ्कर शिवकर हर सर्व मोह, योगी योगीश्वर काम द्रोह।
हो सूक्ष्म निरञ्जन सिद्ध बुद्ध, कर्माञ्जन मेटन तोय शुद्ध॥ २॥

भवि कमल प्रकाशन रवि महान, उत्तम वागीश्वर राग हान।
हो वीत द्वेष हो ब्रह्म रूप, सम्यग्दृष्टि गुण राज भूप॥ ३॥

निर्मल सुख इन्द्रिय रहित धार, सर्वज्ञ सर्वदर्शी अपार।
तुम वीर्य अनन्त धरो जिनेश, तुम गुण पावत नाहिं गणेश॥ ४॥

तुम नाम लिये अघ दूर जाय, तुम दर्शन ते भव-भय नशाय।
स्वामिन् अब तत्त्वन का प्रभेद, कहिये जासे हट कर्म छेद॥ ५॥

मोक्षकल्याणक स्तुति

जय ऋषभदेव गुणनिधि अपार। पहुँचे शिव को निज शक्ति द्वार।
वन्दूँ श्री सिद्ध महन्त आज। सुधरें जासे मम सर्व काज॥ १॥

निर्वाण थान यह पूज्य धाम। यह काल पूज्य है रमणराम।
मन वच तन वन्दूँ बार-बार। जिन कर्मवंश डालूँ उजाड़॥ २॥

कैलाश महा तीरथ पुनीत। जहँ मुक्ति लही सब कर्म जीत।
नहिं तैजस तन नहीं कारमाण। नहिं औदारिक कोई प्रमाण॥ ३॥

है पुरुषाकार सुध्यान रूप। जिन तन में या जिन है स्वरूप।
तनुवातवलय में क्षेत्र जान। पीवत स्वातम रस अप्रमाण॥ ४॥

हो शुद्ध चिदातम सुख निधान। हो बल अनन्त धारी सुज्ञान।
वन्दूँ मैं तुम को बार-बार। भवसागर पार लहूँ अबार॥ ५॥

मोक्षकल्याणक पूजन

(त्रिभङ्गी)

जय जय तीर्थङ्कर मुक्तिवधूवर भवसागर उद्धार करं,
जय जय परमातम शुद्ध चिदातम कर्मकलंक निवारकरं।
जय जय गुणसागर सुखरत्नाकर आत्ममगनता सार लरं,
जय जय निर्वाण पाय सुज्ञानं पूजत पग संसार हरं॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करा मोक्षकल्याणकप्राप्ता: ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करा मोक्षकल्याणकप्राप्ता: ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ: ठ:।

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करा मोक्षकल्याणकप्राप्ता: ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

(वसन्ततिलका)

पानी महान भरि शीतल शुद्ध लाऊँ।
जन्मादि रोग हर कारण भाव ध्याऊँ।
पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं।
पाऊँ महान शिवमङ्गल नाश कालं॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकप्राप्तेभ्यो नम: जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर सुमिश्रित सुगन्धित चन्दनादी।
आताप सर्व भवनाशन मोह आदी॥ पूजूँ सदा०॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकप्राप्तेभ्यो नम: चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दा समान बहु अक्षत धार थाली।
अक्षय स्वभाव पाऊँ गुण रत्नशाली।
पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं।
पाऊँ महान शिवमङ्गल नाश कालं॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकप्राप्तेभ्यो नमः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पा गुलाब मरुवा बहु पुष्प लाऊँ।
दुःख टार काम हर के निज भाव पाऊँ॥ पूजूँ सदा०॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकप्राप्तेभ्यो नमः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे महान पकवान बनाय धारे।
बाधा मिटाय क्षुध रोग स्वयं सम्हारे॥ पूजूँ सदा०॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकप्राप्तेभ्यो नमः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपावली जगमगाय अंधेर घाती।
मोहादि तम विघट जाय भव प्रतापी॥ पूजूँ सदा०॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकप्राप्तेभ्यो नमः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन कपूर अगरादि सुगन्ध धूपं।
पालूँ जु अष्ट कर्म हो सिद्ध भूपं॥ पूजूँ सदा०॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकप्राप्तेभ्यो नमः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मीठे रसाल बादाम पवित्र लाये।
जासे महान फल मोक्ष सु आप पाये॥ पूजूँ सदा०॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकप्राप्तेभ्यो नमः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों सुद्रव्य ले हाथ अरघ बनाऊँ।
संसार वास हर के निज सौख्य पाऊँ॥
पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं।
पाऊँ महान शिवमङ्गल नाश कालं॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकप्राप्तेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२४ तीर्थङ्करों की मोक्षकल्याणक तिथि के अर्घ्य

(गीता)

चौदस वदी शुभ माघ की, कैलाशगिरि निज ध्याय के।
वृषभेश सिद्ध हुए शचीपति, पूजते हित पाय के॥
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग-द्वेष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के॥

ॐ ह्रीं श्रीमाघकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

शुभ चैत सुदि पञ्चम दिना, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
अजितेश सिद्ध हुए भविकगण, पूजते हित पाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपंचम्यां श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

शुभ माघ सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरी निज ध्याय के।
सम्भव निजातम केलि करते, सिद्ध पदवी पाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लषष्ट्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

वैशाख सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
अभिनन्दनं शिव धाम पहुँचे, शुद्ध निज गुण पाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाषष्ट्यां श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

शुभ चैत सुदि एकादशी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री सुमतिजिन शिव धाम पायो, आठ कर्म नशाय के॥
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग-द्वेष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

शुभ कृष्ण फाल्गुन सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री पद्मप्रभ निर्वाण पहुँचे, स्वात्म अनुभव पाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णासप्तम्यां श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

शुभ कृष्ण फाल्गुन सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री जिन सुपार्श्व स्वस्थान लीयो, स्वकृत आनन्द पायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां श्रीसुपार्श्वजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥

शुभ शुक्ल फाल्गुन सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री चन्द्रप्रभ निर्वाण पहुँचे, शुद्ध ज्योति जगाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लासप्तम्यां श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥

शुभ भाद्र शुक्ला अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री पुष्पदन्त स्वधाम पायो, स्वात्म गुण झलकाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लाऽष्टम्यां श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

दिन अष्टमी शुभ क्वाँर सुद, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री नाथ शीतल मोक्ष पाये, गुण अनन्त लखाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाऽष्टम्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १०॥

दिन पूर्णमासी श्रावणी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के ।
जिन श्रेयनाथ स्वधाम पहुँचे, आत्मलक्ष्मी पाय के॥
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग-द्वेष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के॥

ॐ ह्रीं श्रावणपूर्णमास्यां श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ११॥

शुभ भाद्र सुद चौदश दिना, मंदारगिरि निज ध्याय के।
श्री वासुपूज्य स्वथान लीनो, कर्म आठ जलाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लाचतुर्दश्यां श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १२॥

आषाढ़ वद शुभ अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री विमल निर्मल धाम लीनो, गुण पवित्र बनाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णाऽष्टम्यां श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १३॥

अम्मावसी वद चैत्र की, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
स्वामी अनन्त स्वधाम पायो, गुण अनन्त लखाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाऽमावस्यायां श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १४॥

शुभ ज्येष्ठ शुक्ला चौथ दिन, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री धर्मनाथ स्वधर्म नायक, भए निज गुण पाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाचतुर्थ्यां श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १५॥

शुभ ज्येष्ठ कृष्णा चौदसी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री शान्तिनाथ स्वधाम पहुँचे, परम मार्ग बताय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १६॥

वैशाख शुक्ला प्रतिपदा, सम्मेदगिरि निज ध्याय के
श्री कुन्थुनाथ स्वधाम लीनो, परम पद झलकाय के॥
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग-द्वेष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदायां श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १७॥

अम्मावसी वद चैत्र की, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री अरहनाथ स्वधान लीनों, अमर लक्ष्मी पाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाऽमावस्यायां श्रीअरनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १८॥

शुभ शुक्ल फाल्गुन पञ्चमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री मल्लिनाथ स्वथान पहुँचे, परम पदवी पाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लपंचम्यां श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १९॥

फाल्गुन वदी शुभ द्वादशी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
जिननाथ मुनिसुव्रत पधारे, मोक्ष आनन्द पाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाद्वादश्यां श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २०॥

वैशाख कृष्णा चौदशी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के ।
नमिनाथ मुक्ति विशाल पाई, सकल कर्म नशाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २१॥

आषाढ़ शुक्ला सप्तमी, गिरनारगिरि निज ध्याय के।
श्री नेमिनाथ स्वधाम पहुँचे, अष्टगुण झलकाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लासप्तम्यां श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २२॥

शुभ श्रावणी सुद सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री पार्श्वनाथ स्वथान पहुँचे, सिद्धि अनुपम पाय के॥
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग-द्वेष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लासप्तम्यां श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २३॥

अम्मावसी वद कार्तिकी, पावापुरी निज ध्याय के।
श्री वर्द्धमान स्वधाम लीनो, कर्म वंश जलाय के॥ हम०॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाऽमावस्यायां श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २४॥

जयमाला

(भुजङ्गप्रयात)

नमस्ते नमस्ते नमस्ते जिनन्दा। तुम्हीं सिद्ध रूपी हरे कर्म फंदा॥
तुम्हीं ज्ञानसूरत भविक नीरजों को। तुम्हीं ध्येय वायू हरो सब रजों को॥ १॥

तुम्हीं निष्कलङ्क चिदाकार चिन्मय। तुम्हीं अक्षजीतं निजाराम तन्मय॥
तुम्हीं लोक ज्ञाता तुम्हीं लोकपालं। तुम्हीं सर्वदर्शी हता मान कालं॥ २॥

तुम्हीं क्षेमकारी तुम्हीं योगिराजं। तुम्हीं शान्त ईश्वर किया आप काजं॥
तुम्हीं निर्भयं निर्मलं वीतमोहं। तुम्हीं साम्य अमृत पियो वीतद्रोहं॥ ३॥

तुम्हीं भव उदधि पारकर्ता जिनेशं। तुम्हीं मोहतम के निवारक दिनेशं॥
तुम्हीं ज्ञान वीरं भरे क्षीरसागर। तुम्हीं रत्नगुण के सुगम्भीर आकर॥ ४॥

तुम्हीं चन्द्रमा निज सुधा के प्रचारक। तुम्हीं योगियों के परमप्रेम धारक॥
तुम्हीं ध्यानगोचर हो तीर्थङ्करों के। तुम्हीं पूज्य स्वामी परम गणधरों के॥ ५॥

तुम्हीं हो अनादि नहीं जन्म तेरा। तुम्हीं हो सदा सत् नहीं अन्त तेरा॥
तुम्हीं सर्वव्यापी परम बोध द्वारा। तुम्हीं आत्मव्यापी चिदानंद धारा॥ ६॥

तुम्हीं हो अनित्यं स्व परिणाम द्वारा। तुम्हीं हो अभेदं अमिट द्रव्य द्वारा॥
तुम्हीं भेदरूपं गुणानन्त द्वारा। तुम्हीं नास्तिरूपं परानन्त द्वारा॥ ७॥

तुम्हीं निर्विकारं अमूरत अखेदं। तुम्हीं निष्कषायं तुम्हीं जीत वेदं॥
तुम्हीं हो चिदाकार साकार शुद्धं। तुम्हीं हो गुणस्थान दूरं प्रबुद्धं॥ ८॥

तुम्हीं हो समयसार निज में प्रकाशी। तुम्हीं हो स्वचारित्र आतम विकाशी॥
तुम्ही हों निरास्त्रव निराहार ज्ञानी। तुम्हीं निर्जरा बिन परमसुख निधानी॥ ९॥

तुम्हीं हो अबंधं तुम्हीं हो अमोक्षं। तुम्हीं कल्पनातीतं हो नित्य मोक्षं॥
तुम्हीं हो अवाच्यं तुम्हीं हो अचिन्त्यं। तुम्हीं हो सुवाच्यं सु गणराज नित्यं॥ १०॥

तुम्हीं सिद्धराजं तुम्हीं मोक्षराजं। तुम्हीं तीन भू के सु ऊरध विराजं॥
तुम्हीं वीतरागं तदपि काजसारं। तुम्हीं भक्तजन भाव का मल निवारं॥ ११॥

करें मोक्षकल्याणकं भक्त भीने। फुरैं भाव शुद्धं यही भाव कीने॥
नमे हैं जजे हैं, सु आनन्द धारें। शरण मङ्गलोत्तम तुम्हीं को विचारें॥ १२॥

(दोहा)

परम सिद्ध चौबीस जिन, वर्तमान सुखकार।
पूजत भजत सु भाव से, होय विघ्न निरवार॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिवर्तमानजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

बिम्बप्रतिष्ठा हो सफल, नरनारी अघ हार।
वीतराग-विज्ञानमय, धर्म बढ़ो अधिकार॥

(श्री पुष्पाञ्जलि क्षिपेत:)

विशेष स्तुति

(त्रिभङ्गी)

जय जय अरहन्ता सिद्ध महन्ता आचारज उवझाय वरं,
जय साधु महानं सम्यग्यज्ञानं सम्यक्चारित्र पालकरं।
है मङ्गलकारी भव हरतारी पाप प्रहारी पूज्यवरं,
दीनन निस्तारन सुख विस्तारन करुणाधारी ज्ञानवरं॥ १॥

हम अवसर पाये पूज रचाये करी प्रतिष्ठा बिम्ब महा,
बहुपुण्य उपाये पाप धुवाये सुख उपजाये सार महा।
जिन गुण कथ पाये भाव बढ़ाये दोष हटाये यश लीना,
तन सफल कराया आत्मलखाया दुर्गतिकारण हर लीना॥ २॥

निज मति अनुसारं बल अनुसारं यज्ञ विधान बनाया है,
सब भूल-चूक प्रभु क्षमा करो अब यह अरदास सुनाया है।
हम दास तिहारे नाम लेत हैं इतना भाव बढ़ाया है,
सच याही से सब काज पूर्ण हों यह श्रद्धान जमाया है॥ ३॥

तुम गुण का चिन्तन होय निरन्तर जावत मोक्ष न पद पावें,
तुमरी पदपूजा करैं निरन्तर जावत उच्च न हो जावें।
हम पठन तत्त्व अभ्यास रहे निज जावत बोध न सर्व लहें,
शुभ सामायिक अर ध्यान आत्म का करत रहें निजतत्त्व गहें॥ ४॥

जय जय तीर्थङ्कर गुण रत्नाकर सम्यग्ज्ञान दिवाकर हो,
जय जय गुण पूरण औगुण चूरण संशय तिमिर हरणकर हो।
जय जय भवसागर तारण कारण तुम ही भवि आलम्बन हो,
जय जय कृतकृत्यं नमें तुम्हें निज तुम सब सङ्कट टारन हो॥ ५॥

जन्म-मरण विनाशक

भगवान की भक्ति

जड़ देह और भगवान आत्मा भिन्न है; इसलिए शरीर की स्तुति से भगवान आत्मा की स्तुति परमार्थ से नहीं होती है। भगवान के आत्मा की स्तुति से ही परमार्थ स्तुति होती है और परमार्थ में तो जैसा भगवान का आत्मा है, वैसा ही अपना आत्मा है; इसलिए अपने शुद्ध-ज्ञायक आत्मा की श्रद्धा, ज्ञान और स्थिरता ही भगवान की परमार्थ स्तुति है, वह धर्म है और उसके लक्ष्य से बीच में भगवान की ओर का विकल्प उत्पन्न होना, वह व्यवहार स्तुति है, उससे पुण्यबन्धन होता है।

जो अल्पज्ञ प्राणी हैं और वीतरागता की प्रीति है, उस जीव को वीतराग भगवान के प्रति भक्ति का राग आये बिना नहीं रहेगा। वहाँ भगवान के सच्चे भक्त को भान है कि जैसा वीतराग केवली भगवान का आत्मा है, वैसा ही मेरा आत्मा है। भक्ति करते हुए जो राग होता है, वह पुण्यबन्ध का कारण है, वह राग मेरा स्वभाव नहीं है – ऐसा भान करना ही भगवान की प्रथम परमार्थ स्तुति है।

भगवान पाँच सौ धनुष ऊँचे; भगवान कञ्चनवर्णी – ऐसे वर्णन द्वारा भगवान आत्मा की परमार्थ स्तुति नहीं होती क्योंकि वह तो देह का वर्णन है। यदि उस समय देह से भिन्न आत्मा के

स्वभाव का लक्ष्य हो तो उस स्तुति को भगवान की व्यवहार स्तुति कहा जाता है। उस व्यवहार स्तुति से पुण्य होता है और आत्मस्वभाव की पहचानरूप जो परमार्थ भक्ति है, वह धर्म है, उससे जन्म-मरण का अभाव होता है।

यदि आत्मा के परमार्थस्वभाव को न पहचाने तो भगवान की भक्ति से जन्म-मरण का अभाव नहीं होता। उसने वस्तुतः भगवान की भक्ति नहीं की, अपितु राग की भक्ति की है।

साधक धर्मात्मा को भगवान की दोनों प्रकार की स्तुति होती है परन्तु उसमें व्यवहार-भक्ति का जो शुभराग है, उस राग को वह आदरणीय नहीं मानता। जो राग को रखने योग्य मानता है, वह जीव, वीतरागता का भक्त नहीं, अपितु मिथ्यादृष्टि है; वीतराग का भक्त, राग को रखनेयोग्य क्यों मानेगा?

(- सोनगढ़ प्रतिष्ठा महोत्सव के प्रवचनों से)